मई २००० रु. 10/-
चन्दामामा

चन्दामामा

सम्पुट-१०२ मई,२००० सञ्चिका-५

अन्तरङ्गम्

कहानियाँ

ज्ञानप्रद धारावाहिक

पौराणिक धारावाहिक

ऐतिहासिक विभूतियाँ

विशेष

Printed and Published by B. Viswanatha Reddi at B.N.K Press Pvt. Ltd., Chennai-600 026 on behalf of Chandamama India Limited, Chandamama Buildings, Vadapalani, Chennai-600 026. Editor: Viswam

इस माह की विशेष

अजीब पेय
(बेताल कथा)

भोन्दू

स्वर्ण-सिंहासन

अभिव्यक्त करो! पुरस्कार लो!

चन्दामामा

सबसे

उत्तम उपहार

आप अपने दूर रहनेवाले करीबियों के लिए सोच सकते हैं

चन्दामामा

उन्हें उनकी पसंद की भाषा में एक पत्रिका दें

असमिया, बंगला, अंग्रेजी, गुजराती, हिन्दी, कन्नड़, मलयालम, मराठी, उड़िया, संस्कृत, तमिल व तेलुगु

और उन्हें घर से दूर घर के स्नेह को महसूस होने दें

शुल्क

सभी देशों में एयर मेल द्वारा
छह अंक 300 रुपये
बारह अंक 500 रुपये
भारत में भूतल डाक द्वारा बारह अंक १२० रुपये

अपनी रकम
डिमांड ड्राफ्ट या मनी आर्डर द्वारा
'चंदामामा इंडिया लिमिटेड' के नाम भेजें

सेवा में:

प्रकाशन विभाग
चन्दामामा इंडिया लिमिटेड
चंदामामा बिल्डिंग्स, वडापलानि, चेन्नई-600 026

संपादक
विश्वम
संपादकीय सलाहकार
रस्किन बंड
मनोज दास

प्रकाशक
बी. विश्वनाथ रेड्डी
मार्केटिंग निदेशक
बी. मधुसूदन
प्रधान कार्यालय
चंदामामा बिल्डिंग्स
वडापलानि, चेन्नई-600 026
फोन-481778
अन्य कार्यालय
दिल्ली
फ्लैट नं. 415, 4थी मंजिल
प्रताप भवन,
एस. बहादुरशाह जफर मार्ग
नई दिल्ली-110 002
फोन : 2270199

मुंबई
2/बी. नाज बिल्डिंग्स
लेमिंगटन रोड, मुंबई-400 004
फोन : 3889763-3886324-3877110
फाक्स : 3889670

संस्थापक
चक्रपाणि, बी. नागि रेड्डी

चन्दामामा के समक्ष नये क्षितिज

चन्दामामा ने एक सपना देखा था। और वह था कि भारत के सभी बच्चे एक साथ मिलकर भविष्य का सपना देखें, एक साथ मिलकर अपने अतीत को जानें। यदि कोई बालक अपने अतीत पर दृढ़ - विश्वास रखता है और भविष्य के प्रति आशावान है तो उसे ज्ञान हो जायेगा कि वह वर्तमान में क्या करे।

आधी शताब्दी से कुछ अधिक समय तक चन्दामामा को इस लक्ष्य की पूर्ति में कुछ सीमा तक सफलता तो मिली। संस्कृत और अंग्रेजी संस्करणों को मिला कर चन्दामामा बारह भारतीय भाषाओं के माध्यम से लाखों बाल पाठकों का प्रिय साथी बन गया। मुम्बई के एक लोकप्रिय और सम्मानित प्रकाशन - मिड-डे के माध्यम से आज यह अपने जीवन के एक और शानदार चरण में प्रवेश कर रहा है, जब यह हमारे उदीयमान और होनहार पाठोंकों के संसार से जुड़ जायेगा। हर शनिवार को मड-डे के साथ आठ पृष्ठों का एक परिशिष्ट होगा - ''चन्दामामा के साथ फन डे।''

इसके अतिरिक्त तुम्हारी पत्रिका इंटरनेट के बृहत संसार में प्रवेश कर चुकी है और उसकी साहसिक यात्रा के प्रथम चरण को असंख्य प्रशस्तियाँ प्राप्त हो चुकी हैं। यह Go Yogi.Com पर उपलब्ध है।

चन्दामामा परीक्षा के द्वारा नहीं, बल्कि दृष्टान्त के द्वारा, आँसू देकर नहीं, बल्कि मुस्कान देकर बच्चों को शिक्षा देने का प्रयास करता है। यह उन्हें इनके अतीत के बारे में इतिहास के नीरस पाठों के द्वारा नहीं, बल्कि रोचक कहानियों तथा आख्यानों के द्वारा बताता है। अपने मिशन के इस नये चरण में, यह नई ऊँचाइयों को छूना चाहता है। यह सन्तुष्ट होकर आराम से नहीं बैठेगा, बल्कि स्वयं और आगे बढ़ता जायेगा तथा निरन्तर बढ़ते हुए पाठकों और दर्शकों के साथ अपने वर्धनशील अनुभवों को बाँटेगा।
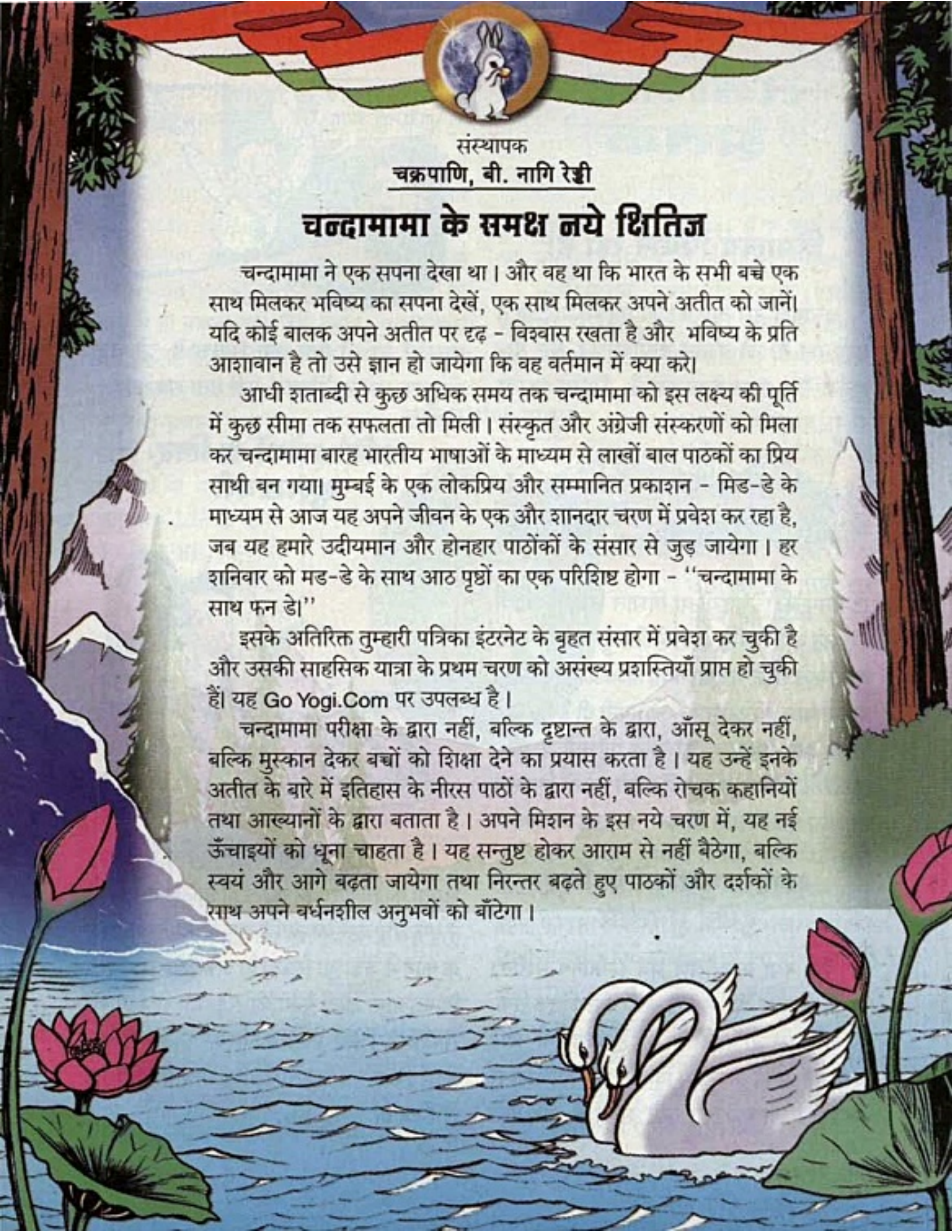
समाचार-झलक

हिमालय पिघल रहा है!

धन्यवाद उस ताप को जो मनुष्य आकाश में छोड़ रहा है, जो कार्बन डायोक्साइड और ग्रीन हाउस गैस ऊपर फेंक रहा है, जिसके कारण

हिमालय की ऊँचाइयों पर विशाल हिमानी नदियाँ पिघलने लगी हैं। सन् 1999 में सिन्धु नदी का जल-स्तर पहले से ऊँचा देखा गया। विश्व प्रेक्षण संस्थान (वर्ल्ड वाच इंस्टिट्यूट) ने चेतावनी दी है कि यदि मानव द्वारा पर्यावरण को क्षति पहुँचाने के काम को रोकने के लिए कदम नहीं उठाये गये तो हिमालय क्षेत्र का एक विशाल निचला भाग बह जायेगा।

अपहरणकर्त्ताओं के लिए दुखद समाचार

एक नया क्रमवीक्षण यंत्र (स्कैनिंग मशीन) यात्री के पास की, ड्रग से लेकर विस्फोटक तक, हर चीज को जो वह ले जा रहा है, बता देगा, चाहे वह उन्हें अपने कपड़ों में कितनी भी सावधानी से क्यों न छिपा कर रखे। दूसरे शब्दों में, यह वैसी

वस्तुओं का भी पता लगा सकता है, जो धातु संसूचक (मेटल डिटेक्टर) नहीं बता सकता।

बधिर लोगों के लिए खुशखबरी

जन्मजात बधिर बच्चे निकट भविष्य में श्रवण-क्षमता का विकास कर सकते हैं। ब्रिटिश वैज्ञानिकों ने एक लघु कर्ण का आविष्कार किया है जो शिशु के कान में जड़ा जा सकता है। इसे देखा जा सकता है। यह बहुत छोटी बैटरी की सहायता से काम कर सकता है जिसे अपने कानों को रगड़ने से पुनः चार्ज किया जा सकता है। यह यन्त्र हियरिंग एड से भिन्न है।

इस माह जिनकी जयन्ती है:

इस महीने में सात मई को आधुनिक भारत के सर्वाधिक ख्यातिप्राप्त कवि रवीन्द्र नाथ ठाकुर का जन्म दिन पड़ता है। इनका जन्म कलकत्ते में हुआ था। इनके पिता देवेन्द्रनाथ ठाकुर हितैषी स्वभाव के अभिजात व्यक्ति थे।

रवीन्द्रनाथ ने बहुत कम आयु में ही साहित्यिक सृजन करना आरम्भ कर दिया था। बीस वर्ष की आयु में ही बंकिम चन्द्र जैसे महान उपन्यासकार और राष्ट्रीय गीत बन्दे मातरम के लेखक ने इनकी प्रतिभा को स्वीकार कर लिया था।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

रवीन्द्रनाथ यद्यपि विश्व भर में महान कवि के रूप में प्रसिद्ध हैं, लेकिन वे उतने ही महान उपन्यासकार, कहानी लेखक और निबन्धकार भी थे। उन्हें सन् 1913 में अपने कविता-संग्रह 'गीतांजलि' के लिए नोबेल पुरस्कार से अलंकृत किया गया, जिसका उन्होंने अंग्रेजी में स्वयं अनुवाद किया था।

वे एक सच्चे देशभक्त थे। जब 'भारतीय राष्ट्रीयता के पैगम्बर' श्रीअरविन्द पर अंग्रेजों द्वारा मुकदमा चलाया जा रहा था, तब उन्होंने ''हे अरविन्द, रवीन्द्र का प्रणाम स्वीकार करो'' नाम की एक प्रेरक कविता लिखी थी।

उनकी देशभक्ति ने उन्हें एक नया विश्वविद्यालय-विश्वभारती, शान्ति निकेतन स्थापित करने की प्रेरणा दी, जहाँ राष्ट्रीय शिक्षा और राष्ट्रीय संस्कृति पर बल दिया गया।

ये बंगला साहित्य परिदृश्य पर सबसे अधिक छाये रहे। भारतीय साहित्य और संस्कृति पर भी इनका प्रभाव पड़ा। सन् 1941 में 7 अगस्त को यह भारतीय साहित्य का रवि अस्त हो गया।

अपनी पुस्तक 'सृजनात्मक एकत्व' (कृएटिव यूनिटी) में रवीन्द्रनाथ ठाकुर कहते हैं: हमारी क्रियाशीलता की अत्यधिक मात्रा बिम्ब विधान में लगी रहती है, उपयोगी उद्देश्य की पूर्ति के लिए अथवा समस्याओं के बुद्धिसंगत सूत्रीकरण के लिए नहीं, बल्कि इस सत्य के भिन्न-भिन्न स्पर्शों को भिन्न-भिन्न उत्तर देने के लिए। इस बिम्ब विधान में बालक अपने चतुर्दिक फैले यथार्थ संसार के उत्तर में एक नितांत अपने संसार का सृजन करता है। हमलोगों के भीतर का बालक वस्तुओं के परदे के पीछे छिपे, समुद्र से उठते हुए प्रोट्यूज अथवा अपनी मालाकार तुरही बजाते हुए ट्राइटन की तरह, अपने शाश्वत बाल सखा की झलक देखता है। और बालसखा वह सत्य है जो बालक के लिए उन क्रियाशीलताओं में आनन्द लेना संभव बनाता है जो न तो जानकारी देती हैं और न किसी प्रकार की सहायता, बल्कि सिर्फ अभिव्यक्त करती हैं। अनन्त में बिम्बविधान का एक आनन्द है जो कल्पना करने में हमारे भीतर हमारे आनन्द को प्रेरित करता है।

चन्दामामा

मई 2000

उत्तर

1. हरिश्चन्द्र और शैव्या, वाराणसी में

2.अ. श्रीकृष्ण ने विदर्भ की राजकुमारी रुक्मिणी से विवाह किया।

ब. बलभद्र ने कुशस्थली की राजकुमारी रेवती से विवाह किया।

स. नल निषाध का राजा था।

द. मार्कण्डेय मुनि ने पुष्पभद्रतीर्थ में तपस्या की।

इ. गुहा शृंगीबरपुरम का राजा था।

3.i. शिलप्पदिकारम इलांगो आदिगल कृत

ii. बृहत कथा गुणाढ्य कृत

iii. महाभारत के बन पर्व में

iv. कम्बन और तुलसी दास

v. चारवाक

ध्यान दें: 1. फरवरी प्रश्नावली की कोई प्रविष्टि न शुद्ध थी, और न पूर्ण।

2. कुछ प्रविष्टियों में उद्धरणों पर टिप्पणी नहीं दी गई थी।

3. प्रश्नावली में भाग लेनेवालों से अनुरोध है कि यदि वे चाहते हैं कि उनकी प्रविष्टियों पर पुरस्कार के लिए विचार किया जाये तो वे प्रश्नावली में दिये गये नियमों का पूर्णतः पालन करें।

सर्जनात्मक स्पर्द्धाएँ

पाठकों को आमन्त्रित करता है
चन्दामामा
निम्नलिखित क्षेत्रों में कल्पना की उड़ान और खोज भरे सर्जनात्मक प्रतियोगों में भाग लेने के लिए :

छाया चित्र
अनुशीर्षक प्रतियोगिता

१. **छायाचित्र अनुशीर्षक प्रतियोगिता पृष्ठ के लिए:** उदीयमान छविकार एक युगल-चित्र भेज सकते हैं, जिसमें दोनों चित्र एक दूसरे से किसी प्रकार सम्बन्धित हों। दोनों चित्रों में सम्बन्ध के बारे में छविकार का अपना स्पष्टीकरण साथ में अवश्य होना चाहिए।

चयनित युगलचित्रों के लिए

पारितोषिक : ५०० रु.

प्रतियोगिता के लिए छाया चित्र किसी समय भेजे जा सकते हैं।
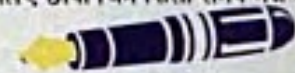
२. चन्दामामा द्वारा घोषित मुहावरा या लोकोक्ति के अर्थ को स्पष्ट करते हुए पाठक १५०-१७५ शब्दों में एक उपाख्यान या चुटकुला, निजी अनुभव या कहानी (नई/पुरानी) भेज सकते हैं। कृपया याद रखें कि आप की रचना में कहानी का तत्व हो, किन्तु वह मूल कथा न हो जिससे यह लोकोक्ति या मुहावरा लिया गया है।

बर्तमान प्रतियोग के लिए

लोकोक्ति :

"होनहार बिरवान के होत चीकने पात"
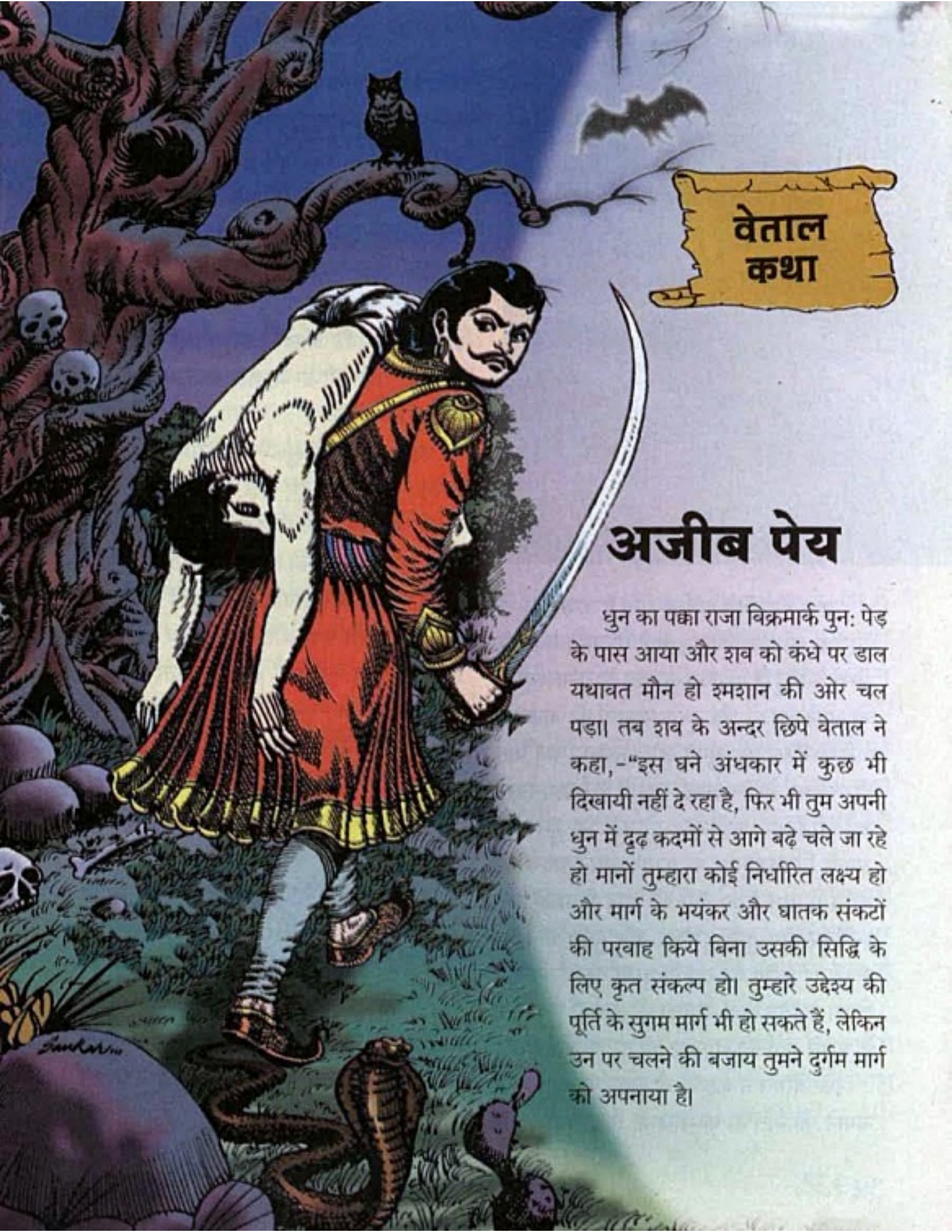
चयनित रचना पर पारितोषिक : ५०० रु.

सभी प्रस्तुतियाँ प्राप्त करने की

अन्तिम तिथि 31 मई, 2000

पुरस्कृत रचना चन्दामामा के जून२००० अंक में प्रकाशित होगी।

वेताल कथा

अजीब पेय

धुन का पक्का राजा विक्रमार्क पुन: पेड़ के पास आया और शव को कंधे पर डाल यथावत मौन हो श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव के अन्दर छिपे वेताल ने कहा,-"इस घने अंधकार में कुछ भी दिखायी नहीं दे रहा है, फिर भी तुम अपनी धुन में दृढ़ कदमों से आगे बढ़े चले जा रहे हो मानों तुम्हारा कोई निर्धारित लक्ष्य हो और मार्ग के भयंकर और घातक संकटों की परवाह किये बिना उसकी सिद्धि के लिए कृत संकल्प हो। तुम्हारे उद्देश्य की पूर्ति के सुगम मार्ग भी हो सकते हैं, लेकिन उन पर चलने की बजाय तुमने दुर्गम मार्ग को अपनाया है।

"राजा का प्रथम कर्त्तव्य होता है अपने शत्रु के षड्यंत्रों का पता लगाना-चाहे वे अपने राज्य के अन्दर के शत्रु हों या राज्य के बाहर के। राजा मयूराक्ष को अपने शत्रुओं और उनके षड्यंत्रों की जानकारी प्राप्त करने का एक सुगम और सुलभ साधन प्राप्त हो गया था। लेकिन अपनी मूर्खता के कारण उसने उसे खो दिया। कहीं ऐसा तो नहीं कि तुमने भी अपनी विवेकहीनता के कारण अपने लक्ष्य की सिद्धि में प्राप्त सुगम मार्ग को छोड़ दिया हो और इसीलिए अब तुम्हें दुसाध्य और दुर्गम मार्ग का अनुसरण करना पड़ रहा है। तुम्हारे मनोरंजन और शिक्षा के लिए राजा मयूराक्ष की कहानी सुना देता हूँ। इससे मार्ग की थकावट भी दूर हो जायेगी।"

फिर वेताल ने कहानी यों सुनाई - बहुत पुराने जमाने की बात है। कम्भोज के राजा मयूराक्ष को विचित्र और नायाब वस्तुओं का बहुत शौक था। ऐसी वस्तुएँ लानेवालों को वह सोने की अशर्फियाँ भेंट करता और राजकीय सम्मान देता। इसलिए दूर-दराज के देशों से प्राय: लोग नई और विचित्र वस्तुएँ लेकर राजा के पास आते रहते थे।

एक दिन राजा के दरबार में एक विचित्र आगन्तुक आया। उसका पूरा शरीर काले लबादे से ढका था। उसकी आँखें भावशून्य थीं। सिर गंजा था और थोड़ी-सी लम्बी दाढ़ी थी। उसके हाथ में एक सुराही थी।

उसने राजा को झुक कर सलाम किया और अपना परिचय देते हुए कहा,-"महाराज, मैं भूतों के गुरु कलहकेतु का शिष्य गरल भोगी हूँ। मैंने लम्बे समय तक गुरु की सेवा कर एक अजीबोगरीब पेय बनाने की विधि सीखी है। इसके पीने से मनुष्य के अन्दर छिपा एक और मनुष्य बाहर आ जाता है। छिपा हुआ मनुष्य ही असली व्यक्ति होता है।

राजा को आगन्तुक की वेश भूषा निराली लगी। अब उसकी निराली बात सुन कर वह और भी चकित हो गया। आश्चर्य के साथ उसने पूछा,-"मनुष्य के अन्दर छिपा एक और मनुष्य, क्या मतलब है तुम्हारा? क्या एक मनुष्य के अन्दर दो व्यक्ति रहते हैं? तुम्हारी बात पहेली जैसी लगती है।"

"हाँ महाराज! हर व्यक्ति के दो रूप होते हैं-एक बाहरी और दूसरा अन्दरुनी। कई ऐसे लोग होते हैं जो दिखाने के लिए कुछ और आचरण करते हैं पर अन्दर से चाहते कुछ और हैं। उदाहरण के लिए आप के दरबार में कुछ लोग ऐसे भी होंगे

जो बाहर से आप के प्रति भक्ति का नाटक करते होंगे, परन्तु भीतर से आप के शत्रु होंगे। इस पेय के प्रभाव से व्यक्ति का भीतरी रूप यानी असली रूप सामने आ जाता है।"

"आश्चर्यजनक!" राजा ने विस्मय प्रकट किया।

"क्या इसे प्रमाणित कर सकते हो?" राजा ने अपनी भृकुटि चढ़ा कर पूछा।

"हाँ, महाराज! आप सामने द्वार पर खड़े पहरेदार को पिला कर देख लीजिये। हाथ कंगन को आरसी क्या?" आगन्तुक ने कहा।

राजा ने फौरन पहरेदार को बुलाया और आगन्तुक द्वारा लाया गया पेय पीने का आदेश दिया। आगन्तुक ने सुराही से थोड़ा पेय उसे पिला दिया।

कुछ ही क्षणों में पहरेदार का रूप-रंग बदल गया। वह राजा की उपस्थिति में ही अशिष्ट जैसा बर्ताव करने लगा। उसने राजा के पास बैठे मुख्य रक्षा पाल की ओर क्रोध से देखा और ऊँची आवाज में कहा,-"ओ बड़ा रक्षापाल! नीचे उतर। तूने सबके सामने मुझे तमाचा मारा! मैं अभी बताता हूँ।'' यह कहते हुए उसने अपना बर्छा उसके ऊपर फेंका।

मुख्य रक्षापाल ने अपनी ओर आते हुए बर्छे को फुर्ती से अपने हाथ से पकड़ लिया। सभी दरबारी यह दृश्य देख स्तंभित रह गये।

"क्या यह सच है कि तुमने उसे तमाचा मारा है?" राजा ने मुख्य रक्षापाल से जवाब तलब किया।

"हाँ महाराज! एक दिन इस द्वारपाल ने अपने कर्त्तव्यपालन में भूल की थी। इसीलिए मैंने उसे दंड संहिता में प्राविधान के अनुसार दण्ड दिया था।" मुख्य रक्षापाल ने स्पष्ट किया।

"इसका अर्थ यह है कि पहरेदार के मन में रक्षापाल के प्रति प्रतिशोध की भावना सुलग रही थी जो पेय के प्रभाव से सामने आ गई।" राजा ने कहा।

"हाँ, महाराज! हमारा पेय छिपे हुए व्यक्ति को बाहर ला देता है। आप इसकी मदद से जान सकते हैं कि व्यक्ति का असली व्यक्तित्व क्या है।" आगन्तुक ने कहा।

यह पेय सचमुच बहुत विचित्र और नायाब है। हमने ऐसी अनोखी वस्तु अब तक नहीं देखी। यह हमारे लिए बहुत उपयोगी और महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकती है।" उन्होंने मन ही मन सोचा।

उन्होंने पहरेदार को बन्दी बनाने का आदेश दिया और आगन्तुक को अतिथि भवन में सम्मान के साथ ठहरने का प्रबन्ध करवा दिया।

उस दिन मुख्य रक्षापाल ने राजा से एकान्त में मिल कर कहा,-"महाराज, मुझे सन्देह है कि पहरेदार ने आगन्तुक से मिल कर यह तमाशा किया है। मैं स्वयं उसके पेय के प्रभाव की जाँच करना चाहता हूँ। इसलिए आप से प्रार्थना है कि थोड़ा-सा पेय मेरे लिए भी मंगवा दें।"

"विचार बुरा नहीं है। पहले प्रयोग का प्रभाव हो सकता है एक संयोग हो या इसके पीछे कोई धोखा हो। दूसरे प्रयोग से वास्तविकता स्पष्ट हो जायेगी।" यह सोच कर राजा ने पेय की थोड़ी मात्रा उसके लिए भी मंगवा दी।

मुख्य रक्षापाल पेय को लेकर रात को शिवमन्दिर में चला गया। वहाँ एक जटाधारी साधु ध्यान में बैठा था। रक्षापाल ने उसे दण्डवत करके विनयपूर्वक प्रार्थना की,-"महाराज, मैं आज ही काशी से तीर्थयात्रा करके लौटा हूँ। इस पात्र में वहाँ का पवित्र गंगा जल है। आप यदि ग्रहण करें तो मुझे पुण्य मिलेगा।"

साधु ने उसे आशीर्वाद देकर उसका पेय पी लिया। मुख्य रक्षापाल उस साधु को ध्यान से देखने लगा कि उसके व्यवहार में क्या अन्तर आता है। तभी साधु अचानक तेजी से उठा और उसने अपने दण्ड और चिमटे से रक्षापाल की खूब पिटाई की। इतना ही नहीं, उसने उसकी सोने की अंगूठी और गले का हार भी छीन लिया।

रात्रि के पहरेदारों ने उसकी रक्षा की और साधु को बन्दी बना लिया।

राजा को महल में जब यह खबर मिली तो पहले रक्षापाल की दुर्गति और कुमति पर वह ठठाकर हँस पड़ा। और फिर गंभीर हो गया। "हमारे राज्य में पता नहीं कितने अपराधी साधुओं के वेश में छिपे पड़े हैं। इस पेय से सब के छिपे चेहरे बेनकाब हो जायेंगे। मैं इस पेय के निर्माण के लिए लाखों अशर्फियाँ खर्च कर सकता हूँ।" मन ही मन राजा सोच रहा था।

तभी वहाँ रानी आ गई। राजा ने रानी को उस विचित्र पेय की सारी कहानी सुना दी और यह भी बताया कि उसके प्रयोग की सहायता से दो अपराधियों का पर्दाफाश हो चुका है। और भविष्य में यह राज्य भर के सभी अपराधियों को पकड़ने में बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

रानी को उस पेय के इस प्रकार के विशेष प्रभाव पर आश्चर्य अवश्य हुआ पर सहसा विश्वास नहीं हुआ।

"मैं जब तक इसकी जाँच स्वयं न कर लूँ, मैं नहीं मान सकती कि इसके प्रभाव से अपराधियों

का पता लगाया जा सकता है।" रानी ने अपना सन्देह व्यक्त करते हुए कहा।

"चाहो तो तुम भी आजमा लो। लेकिन सावधान रहना। कहीं रक्षापाल की तरह तुम्हारी भी दुर्गति न हो जाये।" रानी से विनोद करते हुए राजा ने कहा।

"हाँ महाराज! सचमुच, मैं भी निश्चित रूप से इसका प्रयोग करना चाहूँगी। और जब तक मैं अपना भी विचार न दे दूँ, तब तक, मेरी प्रार्थना है, इस सम्बन्ध में कोई निर्णय न लें।

"ठीक है।" राजा ने कहा और रानी के लिए भी थोड़ा पेय मंगवा दिया।

रानी ने उस पेय को अपनी परिचारिका सुभाषिणी को पिला दिया। उस पेय को पीकर वह सीधी महल की पाकशाला में गई और रसोइये से कहा,-"कल महारानी ने हमें सिर्फ इसलिए अपमानित किया कि मैंने उन्हें पारिजात की खुशबू से नहीं स्नान करा कर चमेली के इत्र से क्यों नहला दिया। इस मौसम में पारिजात के फूल नहीं मिलते तो मेरा क्या दोष? मैं यह अपमान नहीं सह सकती। मैं इसका बदला लेकर रहूँगी। आज रानी के भोजन में जहर मिला देना। मैं आज स्वयं उसका भोजन लेकर जाऊँगी और अपने हाथों से खिलाऊँगी।''

रसोइये से यह बात सुन कर रानी हैरान हो गई और मन ही मन विचार करने लगी कि पेय पीने के बाद सुभाषिणी के व्यवहार में विपरीत परिवर्तन क्यों हो गया जब कि सुभाषिणी उसे अपने प्राणों से भी अधिक चाहती है।

राजा को जब समाचार मिला तो उसने रानी से कहा,-"अब तो तुम्हारा सन्देह दूर हो गया। इस

विचित्र पेय के द्वारा तीन दुष्ट व्यक्ति पकड़े गये। अब लाखों अशर्फियाँ खर्च करके भारी मात्रा में इस पेय का निर्माण कराऊँगा और अपने सारे कर्मचारियों, अधिकारियों तथा अपनी प्रजा को पिला कर यह पता लगाऊँगा कि इनमें कौन अच्छे हैं और कौन बुरे। दुष्ट लोगों को दण्ड दूँगा। संसार के लोग यही कहेंगे कि काम्भोज राज्य में सिर्फ अच्छे लोग रहते हैं। सर्वत्र काम्भोज की कीर्ति फैल जायेगी।''

रानी ने राजा की बातें ध्यान से सुनने के बाद कहा,-''अब भी मुझे उस पेय के प्रभाव पर सन्देह है। सुभाषिणी मुझे अपने प्राणों से अधिक चाहती है। उसके मन में मेरे प्रति कोई दुर्भावना या दुष्टता नहीं है। यह तो उस दिन की घटना से स्पष्ट है जब आप के सामने ही उसने उद्यान में मेरी रक्षा के

मनुष्य होने के लिए अनुशासन अनिवार्य है। अनुशासन के बिना तुम मनुष्य नहीं, पशु हो। —श्रीमाँ

लिए अपने प्राणों को हथेली पर रख कर केवड़े के वृक्ष पर से साँप को पकड़ लिया था और उसे दूर फेंक दिया था।''

यह सुनते ही राजा तेजी से उठा और महल के मुख्य द्वार का घण्टा बजाने लगा। देखते-देखते अनेक सैनिक दौड़ कर आ गये। राजा ने उन्हें आज्ञा दी कि फौरन जाओ और अतिथि भवन में ठहरे हुए लबादेवाले आगन्तुक गरल भोगी को पकड़ कर चाकूवाले कुएँ में डाल दो।

बेताल ने यह कहानी सुना कर राजा विक्रमार्क से पूछा,-"राजन! राजा का, गरल भोगी को चाकूवाले कुएँ में डाल देने का निर्णय क्या अविवेक पूर्ण नहीं है? पेय की सहायता से वह जान सकता था कि कौन उसके मित्र और हितैषी हैं और कौन शत्रु। वह जान सकता था कि कौन चोर है, हत्यारा है, राजद्रोही है और उन्हें सजा दे सकता था। वह अपने राज्य को अपराधियों और दुष्ट लोगों से बिलकुल मुक्त कर सकता था। लेकिन अपने शत्रुओं को पता लगाने का इतना सुलभ मार्ग और अवसर उसने रानी के कहने पर क्षण भर के आवेश में खो दिया। क्या यह उसकी मूर्खता और विवेक-हीनता नहीं है? मेरे इस प्रश्न का उत्तर जानते हुए भी चुप रहोगे तो तुम्हारे सिर के टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे।"

राजा विक्रमार्क ने कहा,-"राजा विचित्र और अनोखी चीजों पर इतना मुग्ध हो जाता था कि उसके अप्रत्यक्ष और सूक्ष्म दुष्प्रभाव के प्रति अन्धा हो जाता था। यही कारण था कि पेय के बाहरी प्रभाव में वह इतना आ गया कि भूतों के गुरु के शिष्य गरल-भोगी के बारे में इतना भी नहीं सोच सका कि वह भी भूत ही होगा और उसके पूरे राज्य को अपराधियों और दुष्टों से भर देने की नीयत से आया होगा। रानी के पेय पर सन्देह करने पर ही उसे यह मर्म समझ में आया कि पेय अच्छे आदमियों को शैतान बना देता है। इसलिए राजा का, आगन्तुक को कड़ी सजा देने का निर्णय पूर्णत: विवेक पूर्ण है।" राजा का मौन भंग होते ही बेताल उड़कर पुन: पेड़ पर जा बैठा।

दुपट्टा

कन्हैया एक गाँव का छोटा-मोटा व्यापारी था। एक दिन वह अपने व्यापार के सिलसिले में शहर गया। अपना काम पूरा कर लेने के बाद वह खाना खाने के लिए एक भोजनालय में गया। वहाँ उसे अपने गाँव का शंकर मिल गया।

"अच्छा हुआ तुमसे भेंट हो गई, साथ-साथ गाँव लौट चलेंगे।" कन्हैया ने शंकर के कन्धे पर हाथ रखते हुए कहा। शंकर भी कन्हैया से मिल कर प्रसन्न था।

दोनों ने साथ-साथ भोजन किया और पैसे देकर बाहर आ गये।

तभी पीछे से भोजनालय का सेवक दौड़ता हुआ उनके पास आया और बोला, -"आप अपना शॉल भूल कर आ गये साहब। यह लीजिये।" यह कह कर उसने कन्हैया को शॉल देदिया।

कन्हैया ने शॉल लेकर अपने कन्धे पर डाल लिया और जेब से एक अठन्नी निकाल कर सेवक को दे दी। सेवक ने झुक कर सलाम किया और वापस चला गया।

"तुमने अपने शॉल को वापस लाने के इनाम में नौकर को अठन्नी क्यों दे दी? चवन्नी काफी थी।" शंकर ने कहा।

अपने शॉल को कन्हैया ने बड़े गौर से देखा और कहा,-"इतना क़ीमती शॉल हमें अठन्नी में ही मिल गया। यह कोई बुरा सौदा तो नहीं है?"

शंकर आश्चर्य से उसकी ओर देखता रह गया।

—वंशीधर
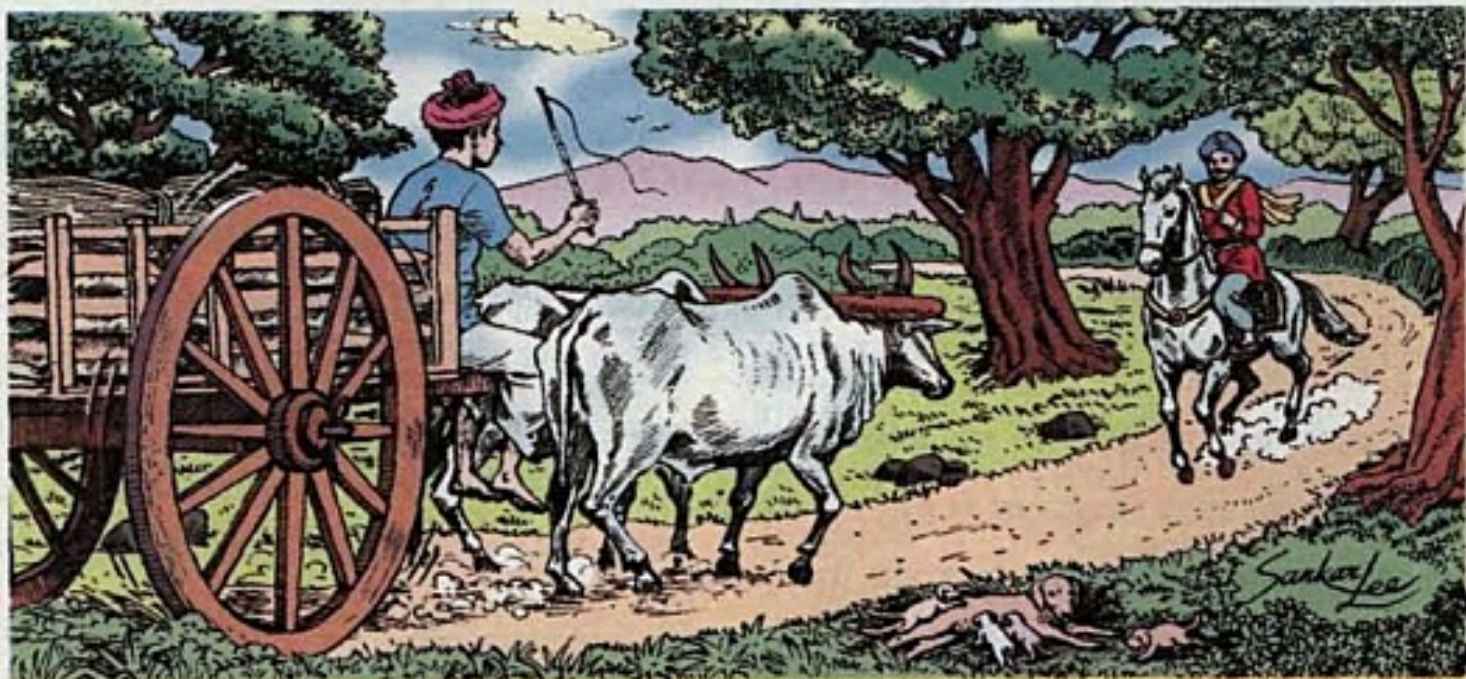
चतुरक्ष

कृष्णापुर का जमीन्दार एक दिन घोड़े पर सवार हो गाँव से बाहर कहीं घूमने निकला। मार्ग में उसने एक झाड़ी की ओट में एक कुतिया को अपने चार नवजात पिल्लों को दूध पिलाते हुए देखा। उसी समय एक किसान बैलगाडी से उसी मार्ग पर विपरीत दिशा से आ रहा था। सामने से जमीन्दार को घोड़े पर आता देख वह घबरा गया। उसने जमीन्दार को मार्ग देने के लिए घबराहट में अपनी बैलगाड़ी सड़क से नीचे उतार दी। सड़क के नीचे की जमीन उबड़-खाबड़ होने के कारण बैलों ने गाडी का संतुलन खो दिया और कुतिया के साथ उसके दूध पीते पिल्ले पहियों के नीचे आ गये। इससे तीन पिल्लों की तत्काल मृत्यु हो गई। कुछ देर तक तड़पने के बाद कुतिया भी स्वर्ग सिधार गई। इस दारुण दृश्य को देख कर जमीन्दार का हृदय करुणा से भर गया। वह जीवित बचे हुए एक पिल्ले को साथ लेकर वापस लौट आया और नौकरों को सौंप कर उसे सावधानी से पालने का आदेश दिया।

उस समय वहाँ जमीन्दार का पुरोहित भी उपस्थित था। उसने पिल्ले को देख कर कहा, "सरकार, इसकी आँखों के नीचे और ऊपर दो-दो बिन्दु हैं। ऐसी चार बिन्दु वाली नस्ल के कुत्तों को चतुरक्ष कहा जाता है। प्राचीन काल में ऐसे कुत्तों को अनिष्ट का प्रतीक माना जाता था और अश्वमेध याग के लिए दिग्विजय यात्रा पर जाने से पूर्व उन्हें मूसल से पीट-पीट कर मार दिया जाता था। इसलिए मेरी दृष्टि में इसे पालना शुभ नहीं है।"

जमीन्दार ने मुस्कुराते हुए कहा,-"कहा जाता है कि प्राचीन युग में नेत्र सूर्य को, मन चन्द्र को, कान दिशाओं को, जीवात्मा प्रजापति को, और

दिव्या जैन

देह के पाँचों प्राण को वायु देव को समर्पित करते हुए बकरी अथवा किसी अन्य जन्तु की सोम याग या अश्वमेध याग में बलि दी जाती थी। आप का कथन है कि चतुरक्ष पाप का प्रतीक माना जाता था और किसी शुभ कार्य पर निकलने के पहले मूसल से मार-मार कर इसके प्राण ले लिये जाते थे। लेकिन मैं इसे कैसे मार सकता हूँ। मेरे कारण इसकी माँ और उसके तीन बच्चे मारे गये। फिर इस अबोध मूक असहाय प्राणी ने मेरा बिगाड़ा ही क्या है? मैं इसके साथ निष्ठुर और क्रूर व्यवहार नहीं कर सकता।

"फिर आप तो पुरोहित हैं। शास्त्रों के ज्ञाता हैं। दुखी प्राणियों पर दया करना तो शास्त्रों में बहुत बड़ा पुण्य माना जाता है। और यह तो सभी जानते और मानते हैं कि मनुष्य मनुष्य को धोखा दे सकता है, लेकिन पशु कभी विश्वासघात नहीं करता।"

पुरोहित कुछ बोल न सका। चतुरक्ष का पालन-पोषण अच्छी तरह किया गया। एक वर्ष के बाद हृष्ट-पुष्ट और सुन्दर दिखने लगा। वह प्राय: जमीन्दार के महल, आस्थान तथा बाग-बगीचों में स्वच्छन्द और निर्भय होकर घूमता रहता था। कभी वह जमीन्दार के आस्थान में उसके बगल में बैठ जाता। वह हर समय सतर्क रहता और आस्थान में आने-जाने वाले आगन्तुकों पर भौंकता रहता। आस्थान के साथ-साथ आस-पास के घरों के लोग भी उसे बहुत प्यार करने लगे। बच्चों का तो जैसे वह प्यारा दोस्त बन गया। पुरोहित को यह सब देख कर बहुत क्रोध आता लेकिन विवश होकर उसे क्रोध को दबाना पड़ता। उसे कुत्ते पर चिढ़ते हुए देख कर लोग हँस पड़ते थे।

एक दिन चतुरक्ष सीधे पुरोहित के घर में आ गया। जमीन्दार का प्रिय और पालतू होने के कारण उसे भगाने का किसी को साहस नहीं हुआ। कुछ दिनों के पश्चात वह पुरोहित की गली के चबूतरों पर सोने लगा और बाद में जिधर पुरोहित जाता, उधर उसके पीछे-पीछे वह भी जाने लगा। पुरोहित दुखी होकर कहने लगा, -"प्राचीन काल में अश्वमेध यज्ञ के लिए घोड़ा स्वच्छन्द होकर घूमता था। मेरे आस-पास स्वच्छन्द होकर श्वान घूम रहा है। कहीं मैं श्वान मेध याग तो नहीं कर रहा हूँ।"

एक दिन सवेरे जब अभी पुरोहित अपने पलंग पर सो ही रहा था कि वह उसके पास आकर जोर-

जोर से भौंकने लगा। छीः छीः करता हुआ पुरोहित उठा और उसे डंडे से मार कर भगाना चाहा। अचानक उसने देखा कि चतुरक्ष खिड़की की ओर देख कर बहुत जोर से भौंकने लग गया। खिड़की पर जैसे ही उसकी नजर पड़ी, वह भय से काँप उठा। वहाँ एक फणिधर नाग अपना फ़न फैलाये फुत्कार रहा था। साक्षात यमराज की तरह नाग को देख कर थोडी देर के लिए उसे लगा कि उसकी धड़कन बन्द हो गई। फिर किसी तरह अपने को संभालता हुआ साँप - साँप चिल्लाने लगा। उसकी चीख सुन कर कुछ लोग इकट्ठे हो गये और साँप को मार डाला।

पुरोहित को साँप को देख कर याद आया कि एक दिन तालाब से नहा कर लौटते समय भोर के अंधेरे में एक साँप के फ़न पर उसका पाँव पड़ गया था। आस्थान में यह बात मैंने लोगों को बताई भी थी। लोगों ने मुझे सावधान भी किया था कि वह साँप बदला लेने किसी दिन आ सकता है। लेकिन मुझे अपने मंत्र पर भरोसा था, इसलिए उनकी बातों की परवाह नहीं की।

उसे यह भी याद आया कि उसी दिन से चतुरक्ष मेरे घर के आस-पास मंडराने लगा और हर समय मेरा पीछा करने लगा। उसे अब विश्वास हो गया कि अवश्य ही मुझे साँप से बचाने के लिए वह हर समय मेरे आस-पास घूमता रहता था। यदि चतुरक्ष मुझे नहीं जगाता तो निश्चय ही साँप मुझे सोते हुए में काट लेता। इसीने आज मेरे प्राण की रक्षा की है। वह यह सोच कर चतुरक्ष के प्रति कृतज्ञता से भर गया।

साँप को मारने के बाद जब सब अपने-अपने घर चले गये, तब पुरोहित ने चतुरक्ष को बड़े प्यार से सहलाते हुए कहा,-"शास्त्र बताता है कि हर प्राणी के प्रति प्रेम और करुणा का भाव रखना चाहिए। मैं शास्त्र का पंडित हो कर भी इस सत्य को भूल गया था। दूसरी ओर, तुम ने मूक पशु होकर भी अपने प्रति घृणा का भाव रखनेवाले की संकट से रक्षा की। मैं तुम्हारी यह शिक्षा सदा याद रखूँगा।"

पुरोहित ने फिर उसे गले से लगा लिया और अपने हाथों से खाना खिलाया।

जब जमीन्दार को यह घटना मालूम हुई तो उसने पुरोहित से कहा, ''चतुरक्ष न होता तो आज तुम्हारी रक्षा कौन करता।''

स्वर्ण-सिंहासन

६

[अब तक: हैहय वंश के कौंडिन्य नरेश पौरस्वत ने दक्षिण के सभी राज्यों को मिला कर एक बड़े साम्राज्य की स्थापना की। उनके मरने के बाद साम्राज्य बिखर गया और सभी राजे स्वतन्त्र हो गये। कालिन्दी का राजा माधव सेन कौंडिन्य का मित्र और सम्बन्धी था। फिर भी चम्पक-नरेश मराल भूपतिने उसे तथा कुन्द के राजा को भी अपने साथ मिला कर कौंडिन्य पर आक्रमण करने की योजना बनाई। माधव सेन अपनी बेटी श्रीलेखा का विवाह मराल भूपति के बेटे से करना चाहता था। लेकिन श्रीलेखा कौंडिन्य के राजकुमार विजयदत्त से विवाह करना चाहती थी। इसलिए वह अपने घर से भागकर कौंडिन्य आ गई। विजयदत्त ने गन्धर्व रीति से उससे विवाह कर लिया। अपने गुरु शिवानन्द के आदेश पर कौंडिन्य के राजा श्रीदत्त ने महल के पास खुदाई करवाई जिसमें एक स्वर्ण-सिंहासन प्राप्त हुआ। उस स्वर्ण-सिंहासन का रक्षक एक सर्प था। विजय दत्तने उसके प्रश्न का उत्तर देकर उस पर विजय प्राप्त कर ली। अपने राज्याभिषेक पर जब वह सिंहासन पर बैठने जा रहा था, तब उसकी पहली सीढ़ी पर की प्रतिमा ने कहा कि जब तक मेरे प्रश्नों के उत्तर नहीं दोगे तब तक आगे नहीं जा सकते। उसने विजय दत्त को कहा,-पहले मैं एक कहानी सुनाऊँगी। और उसी में से कुछ प्रश्न करूँगी। सही उत्तर देने पर तुम पहली सीढ़ी पार कर सकते हो। सही उत्तर नहीं देने पर स्वर्ण सिंहासन अदृश्य हो जायेगा। उसकी कहानी के अनुसार एक मूर्ख और अत्याचारी राजा कालकेतु के शासन से जब प्रजा की हालत असहनीय हो गई तो एक वृद्ध ने, जो वहाँ का पूर्व सेनापति और देश का हितैषी था, पड़ोसी राजा चन्दन वर्मा को देश को संकट से बचाने के लिए एक पत्र लिखा।..... इसके उपरान्त]

श्रीमल्ल का पत्र पाकर चन्दन वर्मा ने अपने गुप्तचरों से यह पता लगाया कि वहाँ की स्थिति क्या है। जब उसे यह मालूम हो गया कि वहाँ की स्थिति सचमुच गंभीर है, तब उसने त्रिपुरान्तक देश पर आक्रमण कर दिया और बड़ी सुगमतापूर्वक विजय प्राप्त कर ली।

चन्दन वर्मा ने वहाँ का राजा बनते ही कालकेतु को रानीसहित महल से निष्कासित कर नगर की सीमा पर एक उद्यानवन में रहने का आदेश दिया। उसने अपने सैनिकों को चित्ररथ को भी पकड़ कर हाजिर करने की आज्ञा दी। सैनिकों ने पूरे नगर में उसे ढूंढा लेकिन वह नहीं मिला। प्रजा से पूछताछ करने पर सबने यही कहा कि हमें उसके विषय में कुछ नहीं मालूम।

लक्ष्मि गायत्रि

चन्दन वर्मा के राजा बन जाने के बाद उसे किसी ने न कोई अपराध करते देखा और न राज्य भर में कहीं अपराध की घटना घटी।

"मैंने सुना है कि आप के आक्रमण के पूर्व से ही वह रोगग्रस्त है। प्रजा में वह बहुत लोकप्रिय था। वह प्रजा का एक मात्र हितैषी और रक्षक होने के कारण प्रजा उसका ऋणी है। हो सकता है, दण्ड मिलने के भय से प्रजा ने ही उसे कहीं गुप्त स्थान में छिपा रखा हो।" पूर्व सेनापति श्रीमल्ल ने कहा।

चन्दन वर्मा ने सोचा कि चित्ररथ यदि रोगग्रस्त है तो कोई न कोई वैद्य उसकी चिकित्सा कर रहा होगा। इसलिए उसने राज्य के सभी वैद्यों पर निगरानी रखने की आज्ञा दी।

एक दिन राजा को यह समाचार मिला कि अश्वमुख नाम का प्रसिद्ध वैद्य किसी की चिकित्सा के लिए रहस्यमय स्थान पर जाता है। उसने वैद्य को बुला कर पूछताछ की। पहले तो वैद्य घबरा गया किन्तु बाद में उसने स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि न वह चित्ररथ के विषय में जानता है और न वह गुप्त रूप से उसकी चिकित्सा कर रहा है।

यद्यपि राजा भाँप गया कि वैद्य झूठ बोल रहा है, फिर भी उसने उसे छोड़ दिया।

दूसरे दिन चित्रनेमि नाम का एक उच्च अधिकारी राजा से रात्रि में गुप्त रूप से मिला और बोला,- ''महाराज, कल रात मैंने अश्वमुख को अकेले कहीं जाते देखा तो चुपचाप उसका पीछा किया। अब मुझे वह स्थान मालूम है जहाँ चित्ररथ रहता है। वैद्य उसी की चिकित्सा करने जा रहा था।'' चन्दन वर्मा ने सैनिकों के साथ स्वयं वहाँ जाकर उसे बन्दी बना लिया।

चित्ररथ को महल के ही एक हिस्से में रख कर राजवैद्य से उसकी चिकित्सा कराई गई और उसके स्वस्थ होते ही उसे त्रिपुरान्तक राज्य का सामन्त राजा घोषित किया गया।

एक सप्ताह के बाद चन्दन वर्मा ने प्रजा के सामने चित्रनेमि को कोड़ों से पिटवाया और घोषणा की कि भविष्य में अनैतिक कार्य करने वालों को इसी प्रकार कठोर दण्ड दिया जायेगा।

उसने कहा,-"चित्ररथ ने निर्धन और दुखी प्रजा की सहायता की। इसीलिए वह प्रजा के प्रेम और सम्मान का पात्र बना। मैंने भी उसे इसीलिए यहाँ का सामन्त राजा बना दिया। उत्तम साध्य के लिए उत्तम साधन का सहारा न लेने के कारण, और लक्ष्य महान होते हुए भी उसे प्राप्त करने का

अनैतिक मार्ग अपनाने के कारण उसने कुछ अपराध भी किये। इसलिए प्रायश्चित के रूप में उसे चित्ररथ स्वामी के मन्दिर में सेवक का काम करना होगा और प्रत्येक एकादशी के दिन उसे वहाँ झाडू लगाना होगा। यही उसकी सजा है।''

सालभंजिका ने कहानी यहीं समाप्त करते हुए कहा,-"ओ भावी महाराज विजयदत्त! चित्ररथ कहाँ छिपा है, इस सत्य की जानकारी केवल चित्रनेमि ने दी। सारी प्रजा तथा स्वयं अश्वमुख वैद्य ने भी, जिन्हें सत्य का पता था, असत्य कहा। लेकिन चन्दन वर्मा ने सत्य बोलने वाले चित्रनेमि को कठोर दण्ड दिया और असत्य बोलने वालों को कोई सजा नहीं दी। अपराध करनेवाले नकाबपोश चित्ररथ को उन्हों ने देश का सामन्त राजा बना दिया। चन्दनवर्मा की दृष्टि में सत्य-असत्य का मानदण्ड क्या है? सच बोलनेवाले को दण्ड देने के पीछे क्या कोई अन्तर्निहित सूक्ष्म धर्म छिपा है? यदि हाँ, तो वह धर्म क्या है? इन प्रश्नों के ठीक उत्तर दोगे तो पहली सीढ़ी पर पाँव रखने के अधिकारी बन जाओगे। अन्यथा तुम्हारी आँखों के सामने यह स्वर्ण-सिंहासन अदृश्य हो जायेगा।"

विजयदत्त ने नतमस्तक होकर नम्रतापूर्वक कहा,-"हे सत्य की आत्मा! आप की कहानी के धीरोदात्त नायक चन्दन वर्मा के सभी आचरण और निर्णय राज धर्मानुकूल हैं और एक सामर्थ्यवान और आदर्श शासक के अनुरूप हैं। चित्ररथ ने आपत्तिकाल में दुखी-असहाय प्रजा की मदद की। राजा के अत्याचार और अन्याय से त्रस्त प्रजा को यथाशक्ति बचाया। यद्यपि उसने इस ऊँचे आदर्श

के लिए गलत मार्ग अपनाया फिर भी उसका कार्य देश के लिए प्रेम और भक्ति से प्रेरित था। उसकी हिंसा और चोरी के पीछे मानवता, परोपकार, दया और करुणा की उदात्त भावनाएँ हैंजो सत्य के शाश्वत मूल्य हैं। वास्तव में चित्ररथ ने मानवता का कर्त्तव्य निभाया है, सच्चे अर्थ में सत्य का पालन किया है। चन्दन वर्मा ने सत्य के इस सूक्ष्म अर्थ को समझा है और तदनुकूल उसका निर्णय सच्चे न्याय पर आधारित है। उसने उसे सजा न देकर सत्य और न्याय की रक्षा की है।

खुशामदी और भ्रष्ट अधिकारी ऐसे लोगों से जो प्रजा का हित चाहते हैं घृणा और द्वेष करते हैं क्योंकि ऐसे लोग उनके भ्रष्ट आचरण में बाधक होते हैं। इसीलिए ईर्ष्या और द्वेष के कारण चित्ररथ को सजा दिलाने के लिए ही चित्रनेमि ने चित्ररथ के विषय में सत्य कहा। इस सत्य के पीछे उसकी

दुर्भावना थी। इसलिए सत्य वचन कहने पर भी चन्दन वर्मा ने चित्रनेमि को दण्ड दिया। यह निर्णय भी सत्य और न्याय के अनुकूल है।

मन, वचन और कर्म-मानव-आचरण के तीन अंगों में से प्रधान है मन। कभी-कभी वचन और कर्म सत्य भासित होते हुए भी यदि सच्चे मन से न बोलें या किये जायें तो वे छल-कपट बन जाते हैं। सच्ची भावना से प्रेरित असत्य भासित होनेवाले वचन और कर्म भी सत्य बन जाते हैं। सत्य-असत्य के इस सूक्ष्म अन्तर को समझने वाला राजा ही प्रजा का सच्चा हितैषी और प्रिय होता है। चन्दन वर्मा इसी कोटि का राजा है। इसीलिए उसने सद्भावना से प्रेरित होने के कारण चित्ररथ के अनैतिक लगने वाले कर्मों के लिए चित्ररथ भगवान की सेवा करने का उसे पवित्र दण्ड भी दिया। ऐसा करके उसने प्रजा को यह बता दिया कि पवित्र और महान लक्ष्य के अनुरूप ही उसकी पूर्ति के साधनों को भी नैतिक और पावन होने चाहिएँ ताके चित्ररथ के शासन-काल में प्रजा अनैतिक मार्गों का अनुसरण न करे। और मन, वचन और कर्म-तीनों स्तरों पर सत्य का आचरण करे।

"चन्दन वर्मा के स्थान पर यदि मैं होता तो मैं भी वैसा ही आचरण करता।"

"बधाई विजयदत्त! मेरे प्रश्नों के सही और उचित उत्तर देकर तुमने सिंहासन की प्रथम सीढ़ी पर चढ़ने का अधिकार प्राप्त कर लिया है। तुम्हारा स्वागत है।"

प्रथम सालभंजिका की बातें सुनकर प्रजा हर्षोल्लास से विजयदत्त की जय-जयकार करने लगी। महाराज श्रीदत्त ने गर्व से अपने पुत्र को हृदय से लगा लिया। आनन्द से भाव-विह्वल श्रीलेखा

की आँखें छलछला आईं। मंगल-वाद्यों के संगीत से बातावरण गूंज उठा। विजयदत्त ने प्रथम सीढ़ी पर कदम रखा।

पहली सीढ़ी पर पाँव रखते ही दूसरी सालभंजिका ने कहा,-"जैसा कि मेरी बहन सत्य की आत्मा ने कहा है, मैं धर्म की आत्मा हूँ। अब मुझसे कहानी सुनो। कहानी के अन्त में मैं भी तुमसे प्रश्न करूँगी।''

एक बार सुवर्णगिरि राज्य में कुशध्वज नाम का राजा राज्य करता था। वह मंत्रियों के परामर्श और सहयोग से बड़ी कुशलतापूर्वक राज्य का शासन-प्रबन्ध चलाता था। उसके शासन-काल में प्रजा सब प्रकार से सुखी और प्रसन्न थी।

राजा का एक पुत्र था-मलयध्वज। वह असाधारण प्रतिभा का बालक था। महानता के लक्षण उसके बाल्यकाल से ही दिखाई पड़ने लगे थे। इसलिए मंत्रियों ने उसे शिक्षा के लिए उस समय के प्रसिद्ध और सर्वश्रेष्ठ गुरु कृष्ण चन्द्र के पास भेजने की सलाह दी। राजा उनसे सहमत होकर राजकुमार को कृष्ण चन्द्र के आश्रम में छोड़ने के लिए स्वयं गये।

अपनी कुशाग्र बुद्धि और असाधारण प्रतिभा के कारण मलय ध्वज शीघ्र ही अपने गुरु का कृपा-पात्र बन गया। उसमें एक कुशल और समर्थ शासक के सभी गुण सहज रूप से विद्यमान थे। जब वह अपनी शिक्षा पूरी करके अपने राज्य में वापस आने की तैयारी कर रहा था, तभी उसे बहुत दुखद समाचार मिला। सुवर्णगिरि के पड़ोसी राजा वज्रकीर्त्ति ने छलपूर्वक आक्रमण कर राजा और

रानी की हत्या कर दी थी और महल पर अधिकार कर लिया था।

इस समाचार से राजकुमार मलयध्वज के हृदय पर मानों वज्राधात हो गया। गुरु कृष्णचन्द्र ने उसे सान्त्वना देते हुए कहा,-"मैं तुम्हारे ऊपर इस समय अचानक और असमय आये हुए संकट को अनुभव कर रहा हूँ, परन्तु जितना शीघ्र हो सके तुम्हें वर्तमान से निकल कर सतर्क रहते हुए गंभीरतापूर्वक भविष्य की चिंता करनी चाहिए। तुम्हारे प्राण पर भी संकट आ सकता है। तुम कुछ दिन और यहीं ठहर जाओ।"

मलयध्वज ने दुख भरे आक्रोश के साथ कहा,-"गुरुदेव, मैं समझता हूँ कि जिस व्याग्र ने मानव रक्त का स्वाद एक बार चख लिया हो, तो दूसरे शिकार की टोह में तो होगा ही। भयभीत होकर छिपने से तत्काल विपत्ति तो टल जायेगी पर भय

बराबर बना रहेगा। इसके विपरीत यदि हम व्याघ्र पर आक्रमण कर उसे समाप्त कर दें तो निर्भय और निश्चिन्त हो सकते हैं।''

उसकी बातों पर विचार करने के बाद गुरु कृष्णचन्द्र ने कहा,-"मैं तुम्हारी तीक्ष्ण दृष्टि, कुशाग्र बुद्धि, असाधारण जीवट और आत्म-विश्वास से परिचित हूँ। तुम जैसा उचित समझो, करो। मेरा आशीर्वाद हर दम तुम्हारे साथ रहेगा। विजयी भव।"

गुरु का आशीर्वाद लेकर मलयध्वज एक साधारण मनुष्य के वेश में चन्द्रहास के साथ घोड़े पर सवार हो निकल पड़ा।

सुवर्णगिरि की सीमा पर एक छोटा सा भीलों का स्वतंत्र प्रदेश था। वहाँ का शासक सिंहगुप्त कुशध्वज का आप्त मित्र था। मलयध्वज संध्या होते-होते उस राज्य में पँहुच कर सिंहगुप्त से मिला। उसने उसे अपना परिचय देकर अपनी योजना भी बताई।

मलयध्वज का परिचय पाकर सिंहगुप्त ने कहा,-"अच्छा हुआ, तुम आ गये। मैं स्वयं तुमसे सम्पर्क करना चाह रहा था। मेरे सैनिक तैयार हैं। तुम्हारे साथ मैं भी रहूँगा और जब तक वज्रकीर्ति को मार कर तुम्हें सुवर्णगिरि के साथ-साथ उसका राज्य भी न दिला दूँ तब तक मेरी आत्मा को शान्ति नहीं मिलेगी।"

हमें इस कार्य के लिए पूरी सेना की नहीं बल्कि आप की सेना का बस एक श्रेष्ठ कुशल योद्धा, कुछ धन, कुछ आभूषण और कुछ विषाक्त सुइयों की आवश्यकता है।

सिंहगुप्त ने उसकी बुद्धि और आत्म-विश्वास पर मुग्ध होकर कहा,-"तुम्हारी योजना तो ठीक लगती है, लेकिन क्या इतना ही काफी रहेगा।"

"हाँ, यदि भाग्य ने साथ दिया तो इतना ही काफी है।" राजकुमार ने आत्मविश्वास के साथ कहा।

दूसरे दिन सुबह सिंहगुप्त ने आवश्यक वस्तुओं के अतिरिक्त एक युवक के साथ मलयध्वज को विदा किया। पुवक और कोई नहीं बल्कि एक कुशन योद्धा व वीरांगना उसकी बेटी शालिनी स्वयं पुरुष वेश में थी। दोनों दो अश्वों पर सवार होकर सुवर्णगिरि की राजधानी की ओर चल पड़े। अन्धेरा होते-होते वे राजधानी के सीमान्त पर पहुँच गये। वहाँ उन्होंने योड़ी देर विश्राम किया। जब एक पहर से अधिक रात बीत गई तो छोड़ों को वहीं छोड कर नगर की वीथियों से वे गुजरने लगे।

एक घर से कुछ लोगों में बातें करने की आवाज आ रही थी। ये दोनों उस घर के पास के चबूतरे पर खड़े होकर ध्यान से उनकी बातें सुनने लगे।

एक स्त्री पूछ रही थी कि क्या ये लोग युवराज की भी हत्या कर देंगे?

"वज्रकीर्त्ति सत्ता की भूख में पागल हो रहा है। वह कुछ भी कर सकता है। उसे धर्म-अधर्म का विचार नहीं है। राज्यप्राप्ति के लिए युवराज को भी मार देने में उसे कोई संकोच नहीं होगा।" एक पुरुष की आवाज ने उत्तर दिया।

कुछ देर चुप्पी के बाद फिर उसने कहा,- "लेकिन असली दोषी तो कन्दर्प है। घर के शत्रु बाहरी शत्रु से अधिक खतरनाक होते हैं। ऐसे लोगों का अंग-प्रत्यंग काट कर गिद्धों को खिला देने से बड़ा पुण्य मिलेगा।"

स्त्री आश्चर्य प्रकट करती हुई बोली, -"क्या हमारे सेनापति कन्दर्प ने ही हमारे राजा और रानी की हत्या की?"

"धीरे बोल। कोई सुन लेगा तो हमारा भी वही हाल होगा। आधी रात हो रही है।? अब सो जा।"

जब बहुत देर तक फिर कोई आवाज नहीं आई तो मलयध्वज ने धीरे से दरवाजे पर दस्तक दिया।

"कौन", पुरुष ने अन्दर से पूछा।

"मित्र।" मलयध्वज ने उत्तर दिया। थोड़ी देर में जब दरवाजा खुला तो मलयध्वज और शालिनी तुरन्त अन्दर चले गये और दरवाजा बन्द कर दिया। फिर मलयध्वज ने संकोच करते हुए पुरुष को अपना परिचय दिया। घर का मालिक सुकेतु अपने घर में अपने युवराज को देख कर बहुत प्रसन्न हुआ। मलयध्वज ने उसे विश्वास में लेकर अपनी योजना बताई। योजना के अनुसार दूसरे दिन सवेरे सुकेतु वज्रकीर्त्ति के शयनागार के पहरेदार लालू को आपनेघर बुला लाया।

मलय ध्वज ने अपनी पोशाक में से एक कीमती हार निकाल कर उसे देते हुए कहा,-"मेरी सहायता के लिए यह तुम्हारा उपहार है।"

"इसकी आवश्यकता नहीं है महाराज! अपना कर्त्तव्य-पालन ही मेरे लिए उपहार है। आप हमारे राजा हैं। आज रात के दूसरे पहर में आप आ जाइये।" पहरेदार ने इतना कहकर युवराज के चरण-स्पर्श किये और बाहर चला गया।

एक महान सभ्यता की झाँकियाँ :
युग-युग में सत्य के लिए इसकी गौरवमयी खोज

5.भागवत कोमलता का प्रवाह

"जब हमलोग वदोदरा गये थे माँ, तो मेरी उम्र क्या रही होगी?" संदीप ने जयश्री से पूछा।

"तुम केवल तीन वर्ष के थे मेरे बच्चे, लेकिन क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है कि तुम्हें यह सब याद है।" जयश्री ने टिप्पणी की।

"मैं उतना याद तो नहीं रख सकता माँ, लेकिन नौका की एक यात्रा मेरे मानस-पटल पर बार-बार उभरती है। एक नदी के किनारे के भवन में हमलोगों ने एक रात बिताई, और दूसरे दिन बहुत सवेरे मुझे गोद में लिए पिता जी और आप एक लीक पर चलते हुए टहलने लगे, तभी नवोदित सूर्य की किरणों ने नदि को एक सुनहले प्रवाह में बदल दिया। आप दोनों बाल रवि को ध्यान से देख रहे थे और मुझे भी देखने को कहा था। वह शान्त निर्मल दृश्य मेरे सपनों में सैकड़ों बार आया होगा।" संदीप ने कहा।

चमेली और संदीप अपने ग्रैंड पा के साथ नाश्ता कर रहे थे। ग्रैंड पा, प्रो देवनाथ अपनी पुत्रवधू और अपने पोते की बातचीत बड़े ध्यान से सुन रहे थे।

"लेकिन वैसा भव्य सूर्योदय अपने जीवन में फिर कभी मैंने क्यों नहीं देखा, ग्रैंड पा?" संदीप ने इस बार ग्रैंड पा से प्रश्न पूछा।

"सूर्योदय हमेशा भव्य होता है, मेरे बच्चे! लेकिन संभवत: उस समय यह पहला अवसर था जब तुमने उसे सचेतन होकर ध्यान से देखा था-क्योंकि तुम्हारे माता-पिता उसके अवलोकन की मनःस्थिति में थे और वे तुम्हें भी दिखाना चाहते थे। दूसरा कारण भी है जिससे वे क्षण तुम्हारी स्मृति में अंकित हो गये।"

"यह करनाली की घटना है। हमलोगों ने नर्मदा किनारे एक आश्रम में रात बिताई थी। विशाल प्राचीन वृक्षों की छाया में वह सचमुच एक मनमोहक स्थान था।" जयश्री ने कहा।

क्रमशः. विश्वास

"वह दूसरा कारण क्या है, ग्रैंड पा, जो आपने अभी कहा।" संदीप ने जिज्ञासा की।

"ओह संदीप! मैं वास्तव में वह बताना नहीं चाहता था, क्योंकि उसे समझने के लिए उसकी व्याख्या करनी होगी, जो शायद बच्चा होने के कारण तुम नहीं समझ पाओगे।"

"संदीप भैया को मत कहिये, पर मुझे बता दीजिये। संदीप भैया बच्चा है, पर मैं बच्ची नहीं हूँ। पिता जी मुझे बूढ़ी कहते हैं।" चमेली ने बात काटते हुए कहा।

ग्रैंड पा हँस पड़े। "मुझे तुम दोनों की बुद्धि पर पूरा विश्वास है। तुम मेरी उस बात को समझने के लिए काफी कुशाग्र हो, जिसे कहने में मैं संकोच कर रहा था, लेकिन शायद कहना पसन्द करूँगा।" ग्रैंड पा ने कहा।

और उन्होंने कहना शुरू किया।

"मनुष्य सिर्फ शरीर, प्राण और मन से ही नहीं बना है। शरीर में यदि प्राण न हो तो यह निर्जीव हो जायेगा। प्राण के आते ही मनुष्य में इच्छाएँ और आवेश भी आ जाते हैं। यदि मनुष्य में मन का विकास, न हो तो मनुष्य पशु के समान रह जायेगा। मन हमें भले और बुरे का विचार करने का ज्ञान देता है जो विवेक कहलाता है। लेकिन मनुष्य के भीतर सर्वश्रेष्ठ वस्तु है - उसकी आत्मा। यह मनुष्य में भगवान का अंश है। इसमें भगवान की सभी दिव्य विशेषताएँ हैं। आत्मा की उपस्थिति के कारण ही मनुष्य भगवान के प्रकाश की ओर बढ़ता है। यह दिव्य उपस्थिति ही मनुष्य को राम और कृष्ण बना देती है, ईसा और बुद्ध बना देती है।

वास्तव में यही मनुष्य का सच्चा स्वरूप है। शरीर, प्रण और मन आत्मा के यन्त्र हैं, उसके सेवक हैं। लेकिन जब तक आत्मा विकसित नहीं होती, प्राण और मन से ही मनुष्य नियंत्रित होते हैं। बचपन में आत्मा यक्ति में उसकी सत्ता के सामने रहती है। सुन्दर और पावन वस्तुओं को देख कर वह द्रवीभूत हो जाती है। प्रेम और स्नेह का बेहतर प्रत्युत्तर देती है। लेकिन बड़ा हो जाने पर, अपनी स्वार्थ बुद्धि के साथ मन, और आवेगों-कामनाओं के साथ प्राण सत्ता पर छा जाते हैं। आशा है, तुम मेरी बात समझ रहे हो।"

"मैं समझ रही हूँ, ग्रैंड पा। भैया से छोटी हूँ, इसलिए मेरी आत्मा अभी भी मेरी सत्ता के सामने है। इसीलिए मैं आश्चर्यजनक वस्तु , जिसे अभी आपने बताया है, मुझे स्पर्श करती है।" चमेली खिलखिलाती हुई बोली।

लेकिन शायद संदीप का मन, दूर, करनाली में समय के प्रवाह के विरुद्ध, तैर रहा था। "ग्रैंड पा, क्या गंगा के समान नर्मदा की भी कोई कहानी है?" उसने पूछा।

"भारत की अधिकांश महान नदियों के पीछे आश्चर्यजनक आख्यान हैं। नर्मदा न केवल मधुर है, बल्कि अत्यधिक काव्यमय है।" प्रोफेसर ने कहा।

और फिर कहानी सुनाई :

"एक बार अमरकण्टक पर्वत पर भगवान शिव बहुत देर तक समाधि में लीन बैठे थे। उनकी शान्त सन्तुलित स्थिति और सम्मोहक आकृति के लावण्य से एक सुन्दर कन्या प्रकट हुई। जैसे ही उसने अपने जीवन के उत्स भगवान शिव के समक्ष नत मस्तक हो उन्हें नमन किया कि करुणावतार शिव ने कहा,-"मेरी बच्ची, तुमने मेरे हृदय को कोमल या नर्म बना दिया है, इसलिए तुम नर्मदा हो।"

भगवान ने आगे कहा,-"तुम मुझसे क्या वरदान माँगना चाहोगी?"

"यह वर दें, प्रभु, कि मैं सदा स्वतंत्र रहूँ।" सुन्दरी ने कहा।

"एवम् अस्तु।" शिव ने आशीर्वाद दिया।

नर्मदा वनों और पर्वतों में गाती, नाचती किसी की परवाह किये बिना घूमती रही।

लेकिन शीघ्र ही उसके सौन्दर्य पर कई देवताओं की दृष्टि पड़ गई। एक देवता ने उसके समक्ष प्रकट होकर उसे पकड़ना चाहा। नर्मदा तत्क्षण जल में परिवर्तित होकर उसकी उंगलियों से फिसल गई और नदी बन कर प्रवाहित होने लगी।

"इस प्रकार शिव के लावण्य से नर्मदा प्रवाहित हुई, जैसे विष्णु के लावण्य से गंगा हुई थी।" प्रोफेसर ने उपसंहार देते हुए कहा।

"सचमुच आश्चर्यजनक!" संदीप ने समीक्षा की। चमेली ने ताली बजाई।

"भारत की नदियों, पर्वतों और वनों के पीछे रोचक कथाएँ हैं। इनमें से अनेक प्रतीकात्मक हैं। किन्तु कालान्तर में इनके प्रतीकों को लोग भूल गये।" ग्रैंड पा ने दुःख के साथ कहा।

"लेकिन केवल कथा के रूप में ही ये कितने मोहक हैं।" संदीप ने टिप्पणी की।

"और कितने मीठे हैं इनके नाम-गंगा, नर्मदा......।" चमेली ने टिप्पणी की।

"भारत में स्थानों के प्राचीन नाम कम मधुर नहीं हैं। क्या तुम पटना का पुराना नाम जानते हो?"

"पाटलिपुत्र।" संदीप और चमेली ने एक साथ कोरस में कहा।

"बिलकुल ठीक! लेकिन उसके पूर्व उसका नाम पुष्पपुर या कुसुमपुर था-फूलों का शहर। ट्रिवेंड्रम तुरु-अनन्त-पुरम था। यह अब पुराने नाम से ही जाना जाने लगा है। इसका अर्थ है-अनन्त भगवान का पावन नगर। द्वारका का नाम द्वारावटी था। गुलमर्ग गौरीमार्ग था, हिमालय की दिव्य पुत्री गौरी के नाम पर। लखनऊ सम्भवतः लक्ष्मण के नाम पर लक्ष्मण वटी था। गौहाटी प्रागज्योतिषपुर था-पूर्व की ज्योतिर्मय आभा। गोवा गोमन्त था। पाँडिचेरी, वैदिक स्वाध्याय का केन्द्र, वेदपुरी था। मदुराई मधुरा पुरा-मधुर शहर था। अजमेर अजय मेरु था। कुलु कुलान्त पीठ यानी मानव निवास की पावन सीमा के नाम से जाना जाता था। किन्नौर किन्नर पुरी था-कलाओं में दक्ष अति भौतिक सत्ताओं की एक प्रजाति का स्थान। पैथान प्रतिष्ठान था। इत्यादि इत्यादि।"

कुछ देर रुक कर ग्रैंड पा ने पुनः कहा,-"राज्यों के नाम भी कितने सार्थक थे। कर्नाटक कुन्तलाद्य था। पंजाब पाँच आब यानी पाँच नदियों से बना। बिहार बौद्ध विहारों के नाम पर कहलाया।

कश्मीर कश्यप-मीर से बना-कश्यप ऋषि से जुड़ी हुई झील।"

"और जम्मू?"

"जम्बू लोचन से, जो नवीं शताब्दी का एक राजा था। हाँ, हमारे बहुत से नगरों पर महान ऋषियों और राजाओं की स्मृति की छाप है। ग्वालियर ग्वालिप्पा मुनि के नाम पर है। नागार्जुन कुण्ड विख्यात बौद्ध भिक्षु नागार्जुन के नाम पर है। जब्बलपुर जाबालि ऋषि के नाम पर है। सूची बहुत लम्बी हो जायेगी।"

ग्रैंड पा खड़े हो गये। स्कूल जाने के लिए बच्चों के तैयार होने का समय हो गया था।

व्यापार का रहस्य

हेला पुरी में हनुमान वैश्य की किराने की दुकान शुद्ध और खरा सौदा तथा वाजिब तौल और कम दाम के लिए इलाके भर में प्रसिद्ध थी। उसका व्यापार फल-फूल रहा था।

तभी सुगंधि पुर से समरस नाम का वैश्य उस गाँव में आया और उसने भी हनुमान की दुकान के ठीक सामने किराने की दुकान खोल दी। कुछ ही दिनों में उसकी दुकान चल गई। हनुमान के पुराने ग्राहक भी समरस की दुकान पर जाने लगे। फलतः हनुमान का व्यापार मंद पड़ने लगा।

हनुमान चिंतित रहने लगा। बहुत सोच-विचार करने के बाद भी वह समझ नहीं पाया कि मेरे ग्राहक उसके पास क्यों जाने लगे। दोनों ही दुकानों में माल शुद्ध तथा तौल और दाम वाजिब होते थे। फिर भी ग्राहक क्यों नहीं आते।

जब हनुमान को कारण पता का नहीं चला तो उसने समरस से ही पूछा।

समरस ने मुस्कुराते हुए कहा, - "हनुमान, यह व्यापार की गुप्त युक्ति है। फिर भी मैं तुम्हें स्पष्ट बता दूँगा। व्यापारी व्यापारी के बीच राज़ कैसा?

"बात यह है कि माल तौलते समय तुम पहले ही पलड़े पर अधिक माल डाल देते हो। फिर बाट के अनुसार उसे थोड़ा-थोड़ा कम करते जाते हो। ग्राहक को माल वाजिब मात्रा में मिलता है लेकिन फिर भी उसे महसूस होता है कि उसे कम मिला है या तुम कम देना चाहते हो।

"लेकिन मैं ऐसा नहीं करता। मैं पहले जानबूझ कर बाट से कम मात्रामें पलड़े पर माल रखता हूँ और थोड़ा-थोड़ा बढ़ा कर बाट के बराबर तौल देता हूँ। मेरा माल भी बाट से ज्यादा नहीं होता, फिर भी ग्राहक समझता है कि मैंने माल ज्यादा दिया है। हम दोनों के व्यापार की पद्धति में फर्क है।

हनुमान ने भी यही पद्धति अपनायी और दोनों दुकानें एक जैसी चलने लगीं। ग्राहकों की नज़र में दोनों दुकानें एक ही परिवार के दो भाइयों की लगती थीं। अब हनुमान और समरस में प्रतिस्पर्द्धा के स्थान पर सहयोग की भावना अधिक थी।

देख - भाल की कला

रमापति नगर के सबसे सम्पन्न सेठ थे। उनके पास इतनी सम्पत्ति थी कि उनकी कई पीढ़ियाँ बिना काम-धाम किये आराम से बैठ कर खा-पी सकती थीं। फिर भी कुछ समय से उनका मन अशान्त रहता था। एक अज्ञात चिंता उनकी आत्मा को जैसे कचोटती रहती थी। कुछ लोगों की सलाह पर उन्होंने वैद्यों से जाँच करायी। पर कोई रोग न निकला।

सेठ रमापति एक धार्मिक और निष्ठावान व्यक्ति थे। अतिथि-सत्कार और साधु-संतों की सेवा उनका स्वभाव था। घर पर आये हुए अतिथियों को खिला कर ही भोजन करते थे।

एक दिन उनके घर पर एक साधु आये। उन्होंने सेठ जी के आतिथ्य से प्रसन्न होकर कहा,-"तुम उत्तम कोटि के मनुष्य हो। तुम हर काम को हृदय से और निष्ठापूर्वक करते हो। परमात्मा तुम्हें सुखी रखें।"

"यह तो मैं नहीं कह सकता, परन्तु प्रयास तो यही करता हूँ कि सेवा में कोई त्रुटि न रह जाये। फिर भी महाराज! कुछ दिनों से मेरा मन अशान्त रहने लगा है। बहुत सोचने-विचारने के बाद भी मैं इसका कारण नहीं समझ पा रहा हूँ।" रमापति ने कहा।

साधु को यह जान कर आश्चर्य हुआ। फिर भी उन्होंने उसकी चिंता का कारण जानने के लिए रमापति से कुछ प्रश्न किये। उसके प्रश्नों के उत्तर से यह पता चला कि परिवार में सब प्रकार से अनुकूल और सामंजस्यपूर्ण वातावरण है।

फिर रमापति की चिंता का कारण क्या हो सकता है? साधु सोचने लगे। थोड़ी देर बाद पूछा,- "क्या इस नगर के अतिरिक्त कहीं और भी तुम्हारी सम्पत्ति है?"

"हाँ महाराज! पाँच गाँवों में उपजाऊ खेत हैं जिनकी देखभाल उन्हीं गाँवों में रहनेवाले किसान करते हैं और समय पर खेतों की आमदनी ईमानदारी से दे जाते हैं।

"याद करो, ठीक से याद करो। कहीं इन खेतों के कारण कभी असंतोष तो नहीं हुआ?" साधु ने फिर कहा।

रमापति ने कुछ याद करते हुए कहा,-"विदुर

सम्पत कुमार
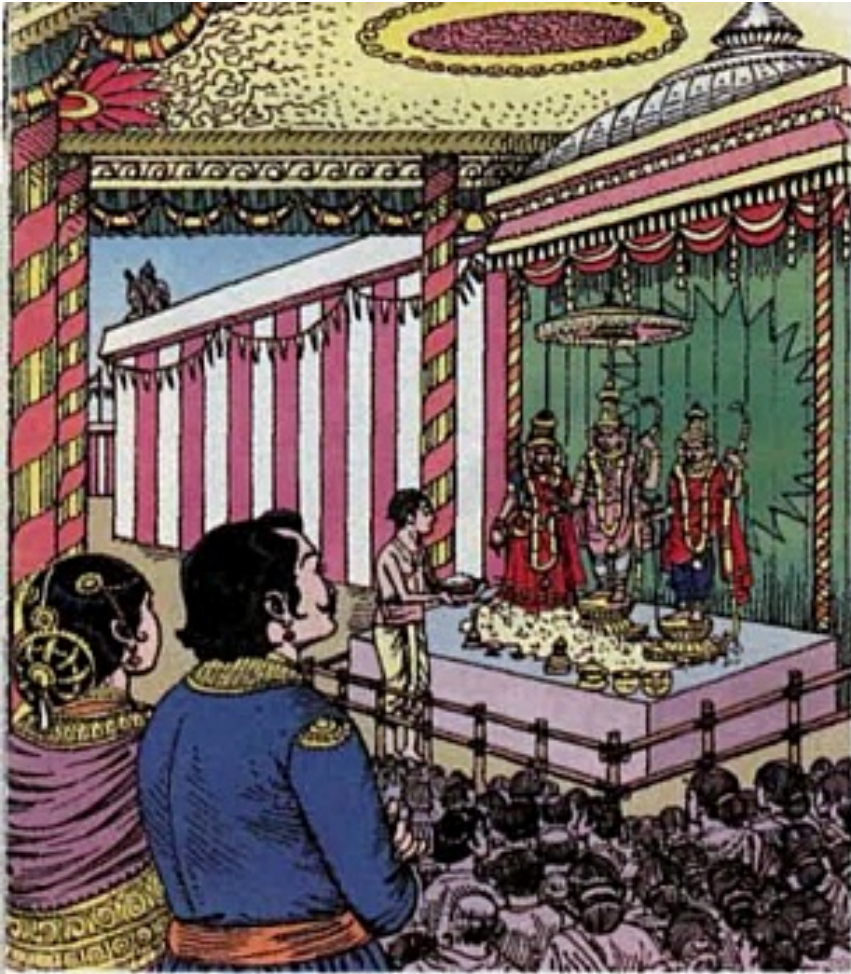
पुर में मेरे नाना ने एक राम-मन्दिर बनवाया था। उसके निर्वाह के लिए कुछ सौ एकड़ भूमि भी दे रखी थी। उस मन्दिर में प्रतिवर्ष भव्य समारोह होता था। लेकिन कुछ वर्षों से यह समारोह नहीं हो रहा है। यह जान कर मुझे दुख अवश्य हुआ। लेकिन मेरे मन की अशांति का कारण यह नहीं है, क्योंकि यह सब मैंने भगवान राम पर ही छोड़ दिया है।"

साधु ने मुस्कुराते हुए कहा, - "यही तुमसे भूल हो गई पुत्र! भगवान को अपने लिए किसी चीज की आवश्यकता नहीं होती। यह सभी जानते हैं। क्या तुम्हारे पूर्वजों को नहीं मालूम था कि भगवान राम चाहें तो अपना निवास स्वयं ढूंढ लेंगे। फिर भी उन्होंने उनके लिए मन्दिर क्यों बनवाया? सौ एकड़ भूमि क्यों दी? क्या उन्होंने भगवान को असमर्थ समझ कर ऐसा किया? वास्तव में भगवान के लिए कुछ करके हम अपना ही कल्याण करते हैं, अपनी ही आत्मा को जगाते हैं और अपने मन की शांति पाते हैं। तुमने मन्दिर की अव्यवस्था का भार उन पर टाल दिया-यही तुम्हारे मन की अशांति का कारण है।"

यह सुन कर रमापति का मन घबरा उठा। उन्होंने अपनी बात को स्पष्ट करते हुए कहा, - ''महाराज! मैं वहाँ की स्थिति देखने पिछले वर्ष पत्नी के साथ गया था, लेकिन सबकुछ ठीक-ठाक पाकर लौट आया। मुझे पता नहीं चला कि गड़बड़ी कहाँ है।इसीलिए सब प्रभु पर ही छोड़ दिया।"

"तुम्हारे पुरखों में जैसी रामभक्ति थी, वैसी अब तुममें नहीं रही। यही कारण है कि सत्य की गहराई में गये बिना ही तुम वापस आ गये। जब तक उस राम मन्दिर में पुनः पूर्ववत् भक्ति - भाव से ओतप्रोत भव्य समारोह नहीं होगा, तुम्हारा मन अशान्त रहेगा।" साधु ने कहा।

"लेकिन महात्मन! इससे मेरे मन की अशांति कैसे जायेगी? यही बात मेरी समझ में नहीं आ रही है। कृपया यह मुझे समझाइए।" रमापति ने साधु से विनयपूर्वक प्रार्थना की।

साधु ने मुस्कुराते हुए और अपनी लम्बी दाढ़ी को सहलाते हुए कहा, -"देखो वत्स! मन्दिर का निर्माण महा यज्ञ के समान है। यह भगवान का शिविर है। यहाँ भगवान की उपस्थिति रहती है जिसके कारण पापियों का पाप कटता है और पुण्यात्माओं का पुण्य बढ़ता है। इसके अतिरिक्त, इसमें काम करनेवालों की इससे जीविका चलती है। उनमें भगवान के प्रति भक्ति और निष्ठा जागती है। इसकी व्यवस्था ठीक से चलती रहे, इसमें विरोधी शक्तियाँ घुसपैठ न करें-यह देखना तुम्हारा परम कर्तव्य है। इस परम कर्तव्य की ओर तुम्हारी

आत्मा निरन्तर संकेत कर रही है जिसे तुम समझ नहीं पा रहे हो और उसी को अशान्ति मान बैठे हो।"

रमापति को लगा कि साधु की बातों में काफी सचाई है। उन्होंने पूछा,-"मुझे राह दिखाइए कि अब मैं क्या करूँ?"

"वहाँ एक बार फिर जाओ और वस्तुस्थिति को समझने की कोशिश करो। और वहाँ की देखभाल किसी योग्य व्यक्ति के हाथ में सौंप दो। निस्सन्देह मन्दिर की देखभाल में ही गड़बड़ी है। देखभाल ठीक होगी तो परिस्थिति अपने आप सुधर जायेगी।" साधु ने अपना विचार सुनाते हुए कहा।

रमापति का दृढ़ विश्वास था कि मन्दिर की व्यवस्था सच्चे और ईमानदार हाथों में है। फिर भी कुछ गड़बड़ी जरूर है। यही जानने के लिए उसने साधु को मन्दिर की सम्पूर्ण देखभाल का विस्तार से विवरण देते हुए कहा,-"साधुवर! राम मन्दिर में चार पुजारी हैं। तीन तो भगवान राम, सीता माता और हनुमान जी की पूजा-अर्चना में लगे रहते हैं और एक पुजारी गोपुरम में वेदमंत्रों का पाठ करता रहता है। श्रीराम-संकीर्तन के लिए चार संगीतज्ञ नियुक्त हैं। पुराणों पर प्रवचन करने के लिए एक कथावाचक है। मन्दिर के खेतों का दायित्व दस किसानों पर है। आय-व्यय का लेखा दो व्यक्ति देखते हैं। इन सब पर निगरानी दो वर्ष पूर्व तक रामशेखर नाम का एक वृद्ध व्यक्ति रखता था। उसके परिवार में कोई नहीं था, इसलिए रात-दिन मन्दिर में ही रहता था और मन्दिर ही उसके लिए सर्वस्व था। उसके दिवंगत होने के बाद उद्दालक नाम के एक व्यक्ति पर यह भार सौंपा गया है। उसके समय से ही देखभाल में ढिलाई आयी है।"

यह सुन कर साधु ने तुरन्त कहा,-"देखो, मेरी बात सच निकली न? अब स्पष्ट है कि गड़बड़ी उद्दालक की देखभाल में है। इसलिए उसके स्थान पर किसी और को नियुक्त करो।"

"लेकिन साधु श्रेष्ठ! उद्दालक का व्यक्तित्व सर्वतोमुखी है। वह स्वयं रसोई बना सकता है। स्वयं झाड़ू लगाने में संकोच नहीं करता और मन्दिर को अत्यन्त स्वच्छ रखता है। शास्त्र और साहित्य का ज्ञान रखता है। संगीतकार भी है। एक-एक पैसे का हिसाब रखता है। और सबसे बड़ी बात है कि वह विश्वसनीय है। ऐसा व्यक्ति कहीं ढूंढने से भी नहीं मिलेगा। विदुरपुर के सभी व्यक्ति उसके बारे में यही विचार रखते हैं।"

"इसका अर्थ यह हुआ कि वह रामशेखर से भी अधिक योग्य है।"

"नहीं महाराज! राम शेखर तो राम भक्ति के अतिरिक्त कुछ जानता ही नहीं था।"

"यह विचित्र बात है। फिर भी कोई गड़बड़ी जरूर है। यह जानने के लिए मैं भी तुम्हारे साथ विदुरपुर चलूँगा और यथाशक्ति तुम्हारी मदद करूगाँ।'' साधुने कहा।

दोनों को विदुरपुर में कुछ दिन ठहरने के बाद यह पता चला कि उद्दालक सचमुच एक योग्य व्यक्ति है, किन्तु वह अपनी पत्नी के कार्य में अधिक व्यस्त रहता है, क्योंकि उसके लिए उसकी पत्नी ही सर्वोपरि है।

उसकी पत्नी सुशीला उच्च कोटि की आराधिका और राम की भक्त है। वह दूसरों की सहायता करने के लिए सदा तत्पर रहती है। यहाँ के कार्यक्रमों में पहल करती है। लेकिन महत्वाकांक्षी है। वह भक्त समाज में अपनी पहचान की भूखी है। इसलिए वह हर दिन संकीर्तन, कथा और वस्त्र या अन्नदान आदि कार्यक्रमों में व्यस्त रहती है। किन्तु इन कार्यक्रमों को व्यवस्थित रूप से स्वयं निष्पादित नहीं कर सकती। इसलिए यह काम उद्दालक से करवाती है।

इतना ही नहीं, मन्दिर के अन्य कर्मचारियों को भी अपने कार्यक्रमों में व्यस्त कर देती है। इससे मन्दिर की मुख्य व्यवस्था में ढिलाई आ गयी।

यह सब जान कर साधु ने मुस्कुराते हुए और अपनी लम्बी दाढ़ी को सहलाते हुए रमापति से कहा, - "मुझे गड़बड़ी का रहस्य मालूम हो गया है। तुम ऐसा करो कि उद्दालक को अपने पद से हटा दो और उसके स्थान पर उसकी धर्मपत्नी सुशीला को बहाल कर लो। सब गड़बड़ी ठीक हो जायेगी।"

"लेकिन महाराज! उसमें तो देखभाल करने की एक भी योग्यता नहीं है।"

"देखभाल करने की सबसे बड़ी योग्यता है - सही व्यक्ति से सही काम लेने की कला और अपनी पहचान की आकांक्षा। ये दोनों गुण उसमें हैं। मन्दिर की देखभाल का दायित्व मिलने पर उसे गर्व का अनुभव होगा और स्वयं योग्य नहीं होते हुए भी वह मन्दिर की देखभाल का निष्पादन उद्दालक से करायेगी। अपने पद से हट जाने पर भी वास्तविक रूप में यह कार्य उसे ही करना होगा, बल्कि वह उसे अधिक प्राथमिकता देकर करेगा, क्योंकि तुमने कहा न कि उसके लिए पत्नी ही सर्वोपरि है।"

साधु ने जैसा कहा रमापति ने वैसा ही किया।

कुछ ही दिनों के बाद राम मन्दिर में पूर्ववत भव्य समारोह हुआ और इसका श्रेय सुशीला को मिला। रमापति का मन अब सचमुच शान्त हो गया। साथ ही, उसे देख-भाल की कला का अन्तर्निहित सत्य भी ज्ञात हो गया।
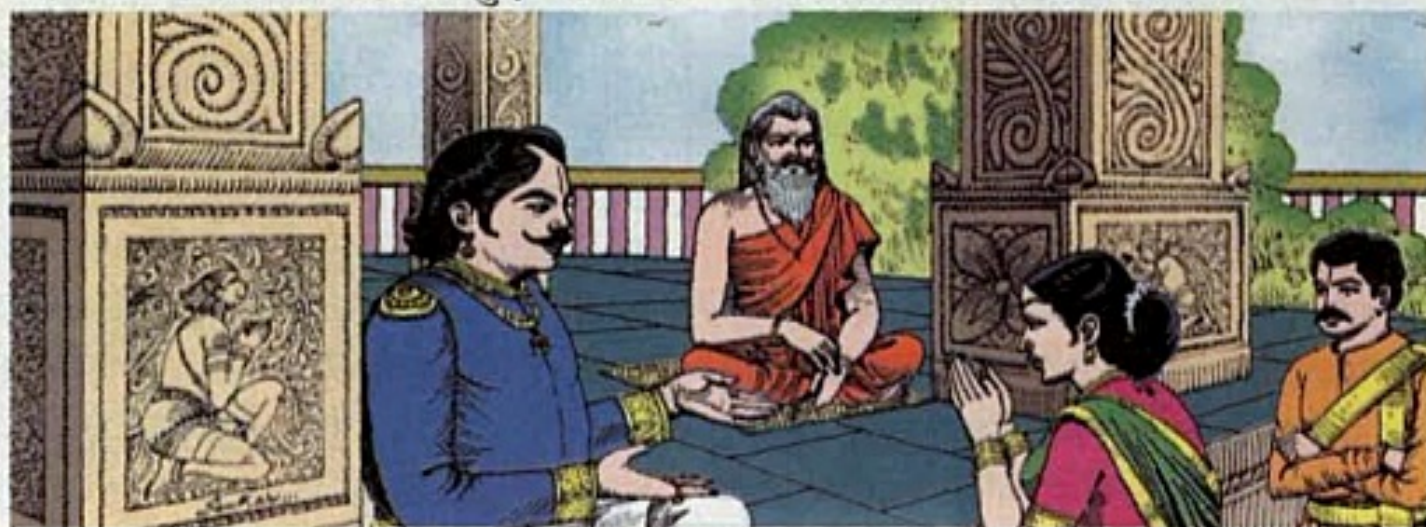
सेन्ट जॉन्स चर्च

कावेरी के किनारे – VIII

प्राचीन बांध

कहानी : जयंती महालिंगम
चित्रण : गौतम सेन

तिरुचिरापल्ली शहर अपने मंदिरों के लिए ही मशहूर नहीं है, बल्कि 18वीं और 19वीं शताब्दी में अंग्रेजों द्वारा वहां बनाये गये सुंदर गिरजाघरों और नगरपालिका आदि के सरकारी भवनों के लिए भी मशहूर है. क्राइस्ट चर्च 1966 में टेम्पेकुलम (तालाब) के उत्तर में बनाया गया था. इसके बाद 1816 में सेंट जॉन्स चर्च छावनी क्षेत्र में किले के दक्षिण में बनाया गया. अवर लेडी ऑफ लॉर्ड्स कैथलिक चर्च 1840 में तालाब के किनारे बनाया गया था. जिस मकान में रॉबर्ट क्लाइव रहते थे, वह अब प्रसिद्ध सेंट जोसेफ कालेज का एक भाग है.

श्रीरंगम टापू पर तिरुवनैक्क में जम्बुकेश्वर महादेव का मंदिर है. इस मंदिर की भव्यता अपने आप में अनूठी है. उसकी ऊंची आकाश छूती अट्टालिकाएं और कई खम्बों वाले दालान को मनोहारी नक्काशी से सजाया गया है. कहा जाता है कि यह प्राचीन मंदिर ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी के आसपास संगम काल में बनाया गया था. इस मंदिर को कोचेंगन्नन नामक चोल राजा ने बनवाया था.

अपूलिंगम् (अपू का अर्थ पानी है) मंदिर की इतनी नीची सतह पर स्थापित है कि उसके चारों ओर हमेशा पानी भरा रहता है. किसी जमाने में मंदिर के स्थान पर जामुन के पेड़ों का उपवन था और एक पेड़ के नीचे शिवलिंग था. एक हाथी और एक मकड़ा शिवजी के अनन्य भक्त थे. मकड़ा शिवलिंग के ऊपर जाला बनाता था, ताकि उसे धूल और पेड़ों

जम्बुकेश्वर मंदिर

शिवलिंग पर रोज पानी लाकर अभिषेक करता हाथी.
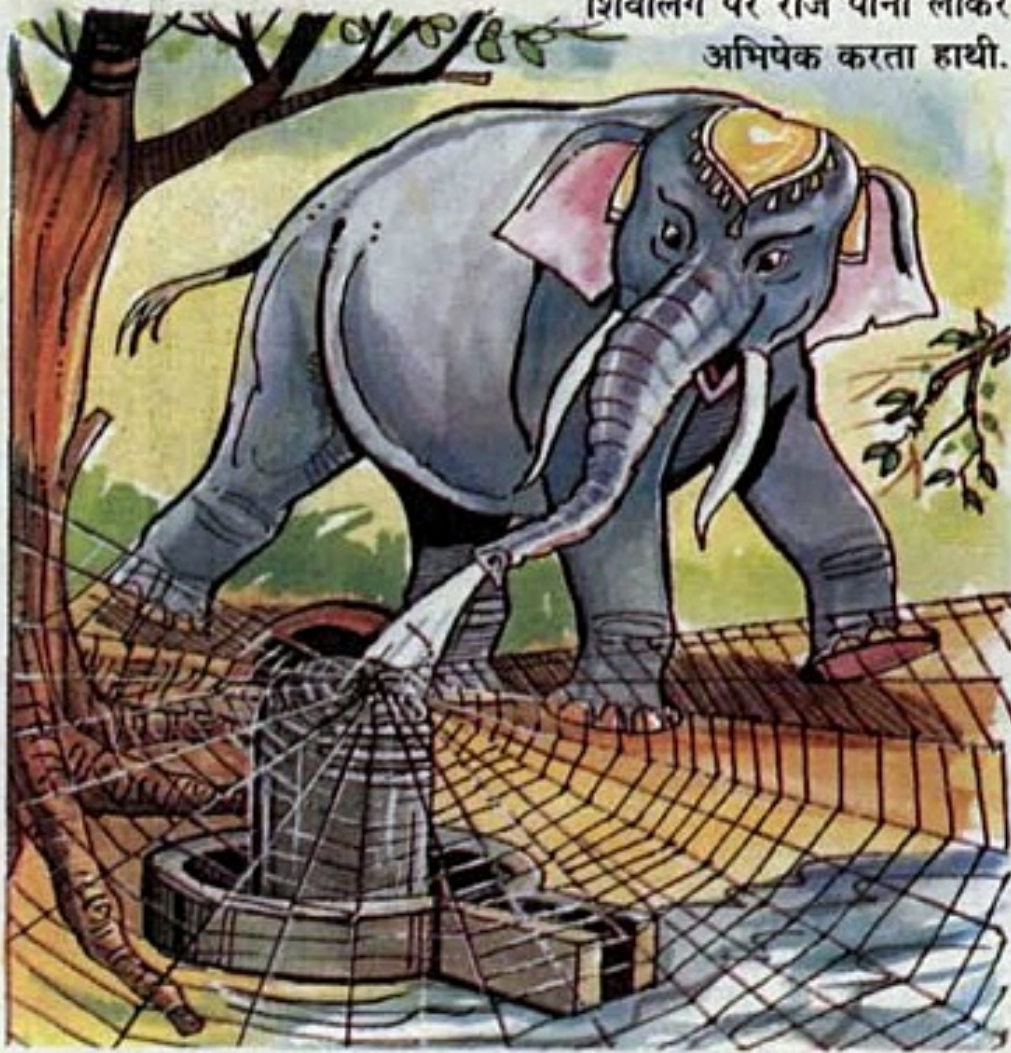
से गिरने वाले पत्तों से बचाया जा सके और हाथी कावेरी से पानी लाकर शिवलिंग पर रोज अभिषेक करता था. इस कारण मकड़े का बनाया हुआ जाला टूट जाता था. इस तरह दोनों की पूजा-पद्धतियों के बीच विवाद खड़ा हो गया था. एक दिन मकड़े को बड़ा गुस्सा आया और उसने हाथी की सूंढ़ में घुस कर जोर से काट लिया. जिससे वह भारी भरकम हाथी मर गया. एक कहानी के अनुसार उसी मकड़े ने उरैयूर के चोल राजवंश में कोचेंगन्नन के रूप में जन्म लिया था.

इस बड़े मंदिर में चार अहाते अथवा परिक्रमाएं हैं. जिनकी दीवारें विशाल हैं और उनमें ऊंचे-ऊंचे खम्बे हैं. दूसरी और तीसरी परिक्रमाएं ईसा की तेरहवीं शताब्दी में बनायी गयीं थीं. चौथी परिक्रमा में अखिलेंदेश्वरी देवी का मंदिर है और उसमें देवीजी की उत्कृष्ट और भव्य मूर्ति है. देवीजी की आंखों में ऐसी चमक है कि वे सजीव मालूम देती हैं. लेकिन एक समय था जब देवीजी का रूप बड़ा रौद्र था और उसमें इतनी उग्रता थी कि कोई भी व्यक्ति गर्भगृह में लंबे समय तक ठहर नहीं सकता था. कहा जाता है कि आदि शंकराचार्य ने देवी के दर्शन किये और देवी को कर्णफूल चढ़ाये जिन पर चक्रबना हुआ था. उसके बाद देवी का रूप सौम्य हो गया. महान मुत्तूस्वामी दीक्षित्तर कर्नाटक संगीत के तीन रत्नो में से एक रत्न थे. वे देवी के रूप से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने देवी की प्रार्थना में कर्ण मधुर पदों की रचना की.

तिरुवनैक्क को तमिलनाडु के शिव मंदिरों में शैवों का सबसे पवित्र स्थान माना जाता है. चोल राजाओं के अलावा होयसाल, पांडय और नायक राजवंशों ने भी इस मंदिर को आश्रय प्रदान किया और उसे उदारता-पूर्वक दान भी दिया. पिछली कई शताब्दियों में इस मंदिर में कई बार अतिरिक्त निर्माण कार्य किया गया तथा समय-समय पर उसमें रद्दोबदल भी किया गया. कर्नाटक की लड़ाइयों के समय अंग्रेजों से बचने के लिए फ्रांसीसियों ने इसी जम्बुकेश्वर मंदिर में शरण ली थी और इसी मंदिर में उन्होंने हथियार डाले थे.

श्रीरंगम टापू से लगभग 2 कि.मी. की दूरी पर कोलेरून या कोलीडम नामक कावेरी की एक शाखा निकलती है. इस स्थान पर एक बड़ा एनीकट या कलानै बना हुआ है. कलानै का अर्थ तमिल भाषा में पत्थर का पुल है. अंग्रेजी का शब्द एनीकट तमिल भाषा के अनैकट्टू से बना है, जिसका अर्थ बांध बनाना है.

कहा जाता है कि करिकलान नामक एक चोल राजा ने इस एनीकट को बनवाया था. इस राजा ने ईसा की दूसरी शताब्दी में राज्य किया था. यह बांध कावेरी को नियंत्रित करके उसके पानी का उपयोग सिंचाई के लिए करने तथा नदी की बाढ़ को रोकने का प्रथम प्रयास था. यह बांध 329 मी. लंबा, 12-18 मीटर चौड़ा और 4-5 मी. गहरा था. मूल बांध अब नहीं है; क्योंकि अंग्रेज इंजीनियरों ने सर ऑर्थर कॉटन की देखरेख में कावेरी डेल्टा योजना के अंतर्गत सन 1800 के लगभग इसे नये सिरे से बनवाया था. 1806 में उन्होंने उसकी ऊंचाई बढ़ायी और 1830 में उस पर जलनियंत्रक फाटक (स्ल्यूज गेट) लगवाये. बांध के निर्माण के समय अंग्रेज इंजीनियरों को यह देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ कि मिट्टी के गारे और सादे पत्थरों से बनाया हुआ यह बांध पानी के प्रचंड बहाव को कैसे रोक लेता था. अपर एनीकट या अपर कोलेरून बांध बड़े एनीकट से लगभग 32 कि.मी. की दूरी पर कॉटन द्वारा 1836-38 के बीच बनवाया गया था. यह बांध 780 मी. लंबा 2 मी. ऊंचा था. जिस पर 22 जलनियंत्रक फाटक लगे थे. 1890-1904 की अवधि में पूरे अपर एनीकट का पुनर्निर्माण करवाना पड़ा था.

बड़े एनीकट के तुरंत बाद डेल्टा के मुहाने से 6 कि.मी. की दूरी पर कावेरी-वेन्नार नियंत्रक 1851 में बनवाये गये थे, ताकि कावेरी की मुख्य सहायक नदियों में पानी की आपूर्ति नियमित की जा सके. कावेरी की ये सहायक नदियां हैं – वेन्नार, वडावर, कन्नानार, बामनी, कुदरामुट्टी और अरसलार. इन नदियों के कारण तंजाउर जिले में कावेरी का डेल्टा बड़ा उपजाऊ हो गया है.

बड़े एनीकट के उत्तर में गंगैकोंडाचोलपुरम् है. यह राजराजा चोल के पुत्र राजेंद्रन की प्राचीन राजधानी थी. उसने भव्य बृहदेश्वर मंदिर बनवाया और उसके गर्भगृह में 3.9 मी. ऊंचे शिवलिंग की स्थापना की.

बड़ा एनीकट

यह दक्षिण भारत का सबसे बड़ा शिवलिंग है. वह चाहते थे कि उत्तर भारत में उनकी विजय के उपलक्ष्य में एक स्मारक बनाया जाए. उनकी सेना उत्तर भारत में बंगाल की सीमा तक पहुंच गई थी और वहां से लौटते समय अपने साथ पवित्र गंगाजल ले आयी थी. इसलिए राजेंद्रन को गंगैकोंडाचोलन भी कहा जाता है अर्थात् वह चोल राजा जो गंगा को दक्षिण में ले आया. मंदिर की वास्तुकला राजराजा के तंजाउर के बड़े मंदिर से कम सुंदर नहीं है. वह एक विस्तृत क्षेत्र में फैला हुआ है, लेकिन उसकी अट्टालिका ऊंचीनहीं है. यह वास्तु कला का एक उत्कृष्ट नमूना है. महामंडप की ओर मुंह करके बैठा हुआ नंदी तंजाउर

गंगैकोंडाचोलपुरम् मंदिर

के नन्दी जैसा ही है. बाद में यह शहर क्यों वीरान हो गया इसके कारण का पता नहीं चलता.

बाद की शताब्दियों में इस मंदिर की ओर किसी ने ध्यान नहीं दिया. कोलेरून पर बांध बनाने में अंग्रेज इंजीनियरों ने इस मंदिर की दीवारों के पत्थरों का उपयोग किया था.

किसी समय तंजाउर का सारा डेल्टा चोलमंडलम् के नाम से जाना जाता था. इसी बात से यह पता चलता है कि इस क्षेत्र में चोल राजाओं का कितना प्रभाव था. ईसा की 9वीं शताब्दी में ही विजयालय चोल राजा ने तंजाउर को अपने राज्य में मिला कर उसे अपनी राजधानी बनाया. संगम काल में कावेरी डेल्टा पर चोल राजवंश का राज्य हुआ करता था. बाद में विजयालय और उसके पुत्र आदित्य के समय चोल राजा पुनः वैभव सम्पन्न और शक्तिशाली हो गये थे. उन्होंने दक्षिण भारत में एक अत्यंत शक्तिशाली साम्राज्य की स्थापना की. यह साम्राज्य तेरहवीं शताब्दी में भी कायम रहा.

तरंगिणी की अक्लमन्दी

जब स्याम बीस साल का हो गया तो एक दिन उसकी दादी ने बैठा कर कहा,-"देख बेटा, जब तू एक साल का भी नहीं था, तब तुम्हारे माता-पिता चल बसे। मैंने ही तुम्हें पाला-पोसा। तुम्हें कुछ याद नहीं होगा, तब तुम बहुत छोटे थे। अपने सामने जवान बेटे-बहू को मरते देख बिलकुल टूट गई थी। मेरा भी जीने का मन नहीं करता था। लेकिन तुम्हें देख कर जीती रही। तुम्हें पालने के लिए क्या-क्या नहीं किया। इस बुढ़ापे में मेहनत - मजदूरी की। घरों में चौका-बरतन किया। कितनी बातें सुनीं। बस, इसी आशा पर कि एक दिन बड़े होकर अपने पावँ पर खड़े हो जाओगे तो मेरी जिम्मेदारी खत्म हो जायेगी। अब तुम जवान हो गये हो। अपनी देखभाल खुद कर सकते हो। मेरा अब कोई भरोसा नहीं। मैं बस इसी दिन का इन्तजार कर रही थी कि कब तू बड़ा होगा और मैं कब शान्ति से मर सकूँगी।

"तू बड़ा तो हो गया है, लेकिन अभी भी बचे-सा नादान है, नासमझ है। और डरपोक भी है। आज की दुनिया के लायक बिलकुल नहीं है। गाँव के लोग तुम्हारे इस स्वभाव से परिचित हैं। यहाँ के लोग लोभी और लालची हैं। वे यहाँ तुम्हें चैन से रहने नहीं देंगे।

"मैंने तुम्हारे लिए किसी तरह बचा कर दस हजार रुपये जोड़े हैं। तू इसे लेकर शहर चला जा और चार-पाँच भैंसें खरीद कर दूध का व्यापार कर। वे मूक-निर्दोष पशु तेरा अहित नहीं करेंगे। यहाँ रहेगा तो गाँववाले कुछ दिनों में ही ये रुपये ठग लेंगे।" इतना कह कर उसने स्याम को एक थैली पकड़ा दी।

संयोग की बात, जिस दिन दादी ने स्याम को समझाया, उसी रात को जो सोई सो सोई ही रह गई। स्याम ने निर्णय कर लिया कि मरने से पहले दादी ने जैसा कहा है, वैसा ही करूँगा।

दादी का श्राद्ध कर्म करने के बाद ही वह किराये का कोई कमरा देखने के लिए शहर जाने की तैयारी करने लगा। उसने सोचा कि यदि रुपये की थैली घर में छोड़ कर जायेगा तो चोरी हो सकती है। इसलिए उसे गाँव के साहूकार के पास छोड़ कर

सुजाता रावल

जाना उचित समझा। उसकी दादी भी उसी के पास धन सुरक्षित रखा करती थी।

इसलिए शहर जाने से एक दिन पहले रकम की थैली लेकर वह साहूकार के पास गया।

उस समय साहूकार और उसकी पत्नी में झगड़ा हो रहा था। कुछ दिनों के बाद उसकी पत्नी की माँ उसके घर पर आनेवाली थी। वह चाहती थी कि उसके लिए वह एक अच्छी-सी साड़ी खरीदे। लेकिन साहूकार कंजूस था और सास के लिए साड़ी खरीदने के लिए तैयार नहीं था। पत्नी इसीलिए क्रोध में थी। स्याम को आया देख वह चुपचाप रसोई घर में चली गई।

स्याम ने रुपयों की थैली देते हुए कहा, -"दो दिनों में शहर से लौट कर वापस ले लूँगा। तब तक के लिए अपने यहाँ सुरक्षित रख लीजिये।"

साहूकार ने थैली लेते हुए कहा, -"क्यों नहीं, अनाथों की सहायता करना तो मेरा धर्म है।"

तभी रसोईघर में क्रोध में तमतमाती हुई साहूकार की पत्नी ने पानी का घड़ा जमीन पर पटक दिया। जोर की आवाज सुन कर स्याम ने डरते हुए पूछा, -"यह कैसी आवाज है साहूकार जी?"

"भूचाल आ रहा है। तुम जल्दी जाओ यहाँ से।"

साहूकार ने स्याम को वहाँ से जल्दी चले जाने के लिए इसलिए कहा कि उसकी पत्नी उसके सामने ही कुछ और न कर बैठे।

स्याम शहर जाकर घर की तलाश में दिन भर घूमता रहा, लेकिन घर कहीं नहीं मिला। शहर से बाहर वापस आते-आते वह काफी थक चुका था। उसे बहुत प्यास भी लग रही थी। तभी वहाँ उसे एक घर दिखाई पड़ा। थोड़ा पानी माँगने के लिए उसने उस घर का दरवाज़ा खटखटाया।

"कौन? क्या चाहिये?" अठारह वर्ष की एक लड़की ने दरवाज़ा खोलते हुए पूछा।

"थोड़ा पानी मिल जायेगा क्या? बहुत प्यास लगी है।" स्याम ने कहा।

"बापू! ज़रा इधर आना। कोई आया है।" चिल्लाती हुई वह पानी लाने अन्दर चली गई।

लड़की का पिता बालमुकुन्द तुरन्त वहाँ आ गया। उसने स्याम से कहा,-"बुरा नहीं मानना बेटे! वह तुम्हें देख कर डर गई होगी। इसलिए चिल्ला कर मुझे पुकारने लगी। दरअसल इतने बड़े मकान में मैं और मेरी बेटी-तरंगिणी, दो ही प्राणी रहते हैं। किसी

नये आगन्तुक को देख कर वह डर जाती है। एक तो घर बहुत बड़ा है, दूसरा, यहाँ आस-पास कोई और घर नहीं है। शहर के किनारे होने के कारण कोई किरायेदार भी यहाँ रहना नहीं चाहता।"

तब तक तरंगिणी पानी लेकर आ गई थी। स्याम ने पानी पीने के बाद बालमुकुन्द को अपने शहर आने का कारण बताया और कहा, -"यदि यहाँ अपनी भैंसों को बाँधने में आप को आपत्ति न हो तो मैं किराये पर आप का मकान ले सकता हूँ।"

अन्धे को आँख मिल जाये तो और क्या चाहिये। बालमुकुन्द तो चाहता था कि उसके घर में कोई किरायेदार आ जाये। किरायेदार भी जान-पहचान हो जाने पर अपना परिवार जैसा ही हो जाता है। यह सोच कर बालमुकुन्द ने प्रसन्न होते हुए कहा, -"तुम जबसे रहना चाहो, आ जाओ। किराया जो मर्जी, दे देना।"

"नहीं पिता जी, किराया अभी तय कर लेना अच्छा रहेगा।'' बीच में तरंगिणी बोल पड़ी। फिर स्याम से कहा, -"दो सौ रुपये महीना देना होगा। मंजूर है?"

स्याम तो घर के लिए परेशान था ही। शहर में न सही, शहर से निकट तो है ही। पानी पीने के बहाने इतनी आसानी से उसे मकान मिल जायेगा, इसकी आशा उसे बिलकुल नहीं थी। उसने इसलिए दो सौ किराया देना स्वीकार कर लिया और "मंजूर है" कह कर दो दिनों में वापस आने का वादा करके अपने गाँव चला गया।

गाँव पहुँचते ही पहले उसने साहूकार के घर जाकर अपने रुपयों की थैली मांगी।

साहूकार उस समय कुछ लोगों के साथ गपशप कर रहा था।

"कैसे रुपये? कैसी थैली? कब दिया था?" साहूकार ने क्रोध और आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा।

"जब भूचाल आ रहा था। याद कीजिये।" उदास और सहमा हुआ-सा स्याम बोला।

ठ्ठा कर हँसता हुआ साहूकार बोला, -"मेरे जन्म से अब तक तो भूचाल आया नहीं। क्या आप लोगों की याद में कोई भूचाल आया है?" वहाँ बैठे लोगों से उसने पूछा।

फिर स्याम को फटकारते हुए कहा, -"अपनी दादी के मरते ही तुम्हारी मति भ्रष्ट तो नहीं हो गई? जा, जा! बड़ा आया है दस हजार की थैली लेने।"

स्याम साहूकार की ऐसी बातें सुन कर अवाक्,

ठगा-सा रह गया। मानो काटो तो खून नहीं। वह सर्वस्व लुटा हुआ-सा, निराश, हतप्रभ समझ नहीं सका कि क्या करे।

उसने शहर जाकर अपने दुर्भाग्य पर आँसू बहाते हुए सब कुछ बालमुकुन्द और उसकी बेटी तरंगिणी को बताया। बालमुकुन्द ने उसके प्रति सहानुभूति प्रकट करते हुए कहा कि भाग्य बहुत प्रबल है। तुम्हारे भाग्य में यही लिखा था। अब हमलोग क्या कर सकते हैं!

लेकिन तरंगिणी ने कहा,-"ऐसा क्यों कहते हैं पिता जी! साहूकार इतनी आसानी से किसी के दस हजार रुपये कैसे हड़प लेगा? उस बेईमान से रुपये वापस लेने की कोशिश तो करनी चाहिये।"

"लेकिन अब हमलोग कर ही क्या सकते हैं? कोई सबूत भी तो नहीं है कि स्याम ने साहूकार को दस हजार रुपये सुरक्षित रखने के लिए दिये हैं।" बालमुकुन्द ने निराश होकर कहा।

"नहीं, रुपये अब भी वापस मिलने की आशा है। जैसे मैं कहती हूँ, वैसे आप दोनों करें तो हो सकता है रुपये वापस मिल जायें।"

तरंगिणी ने अपनी योजना समझते हुए कहा।

दोनों बड़ी सावधानी से एक सन्दूकची लेकर निकल पड़े।

बालमुकुन्द सन्दूकची के साथ साहूकार के घर के अन्दर जाकर कुर्सी पर बैठ गया। स्याम घर के बाहर गली में ठहर गया। साहूकार ने बालमुकुन्द से पूछा,-"तुम कौन हो और किसलिए आये हो?"

बालमुकुन्द ने कहा,-"महाशय, आप की ईमानदारी की धाक सुन कर आया हूँ। मैं इसी गाँव के एक युवक स्याम का होनेवाला ससुर हूँ।"

स्याम का नाम सुन कर घबराते हुए साहूकार ने पूछा, "हाँ हाँ, लेकिन किस काम से आये हैं, यह तो बताइये।"

बालमुकुन्द ने बताया, -"स्याम की दादी की मनौती थी कि उसकी शादी इसी गाँव के राम मन्दिर में हो। शादी के खर्च के लिए साठ हजार रुपये लाया हूँ। यह रही सन्दूकची। इसमें साठ हजार रुपये हैं। शादी के खर्च के लिए थोड़ी-थोड़ी रकम जरूरत के अनुसार लेते रहेंगे। आप गाँव के ईमानदार और बहुत बड़े साहूकार हैं। आप के पास धन सुरक्षित रहेगा। आप को कष्ट दे रहा हूँ। क्षमा कीजियेगा।''

"इसमें कष्ट की कोई बात नहीं है। हममें विश्वास करके सेवा का अवसर दे रहे हैं, यह आप का बड़प्पन है।" साहूकार ने कहा।

इतने में तेजी से स्याम अन्दर आया और बोला, -"कल जब मैं दो दिन पहले आप को दी हुई अपने दस हजार रुपयों की थैली वापस माँगने आया तो

आपने पूछा कि मैंने वह थैली आप को कब दी। क्या अब आप को याद आया? उस दिन आप की पत्नी क्रोध में थी। रसोई घर में जोर से आवाज़ हुई थी। और जब मैंने पूछा कि यह कैसी आवाज है तो आपने ही कहा था कि भूचाल आ रहा है। क्या अब याद आया?"

साहूकार ने स्याम के कन्धे पर हाथ रख कर प्यार से कहा, -"मुझे अच्छी तरह याद है कि तुमने दस हजार की थैली मुझे रखने के लिए दी थी। लेकिन कल मैंने जो भूल जाने का नाटक किया था, वह तुम्हारी भलाई के लिए किया था। जो लोग मेरे पास बैठे थे वे कर्ज मांगने आये थे। मैंने उन्हें कर्ज देने से मना कर दिया था। उन्हें रुपयों की सख्त जरूरत थी। यदि उस समय मैं तुम्हारे रुपये लौटा देता तो वे लोग तुमसे रुपये झटक लेते। मैं तुम्हारे रुपये अभी लाता हूँ।" यह कह कर साहूकार ने अन्दर से लाकर रुपयों की उसकी थैली वापस कर दी। वह थैली लेकर बाहर आ गया।

बालमुकुन्द तभी सन्दूकची लेकर उठ खड़ा हुआ और बोला,-"आप की बातों से पता चल गया कि स्याम कितना नादान और डरपोक है। मेरी बेटी इसके साथ विवाह नहीं कर सकती।" और साहूकार को धन्यवाद कह कर वह भी स्याम के पीछे पीछे चला गया।

साहूकार हताश हो सिर पर हाथ रख कर कुर्सी पर बैठ गया।

दूसरे ही दिन स्याम अपना सारा सामान शहर में बालमुकुन्द के घर ले गया। और उसके प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए कहा, -"आप लोगों के कारण मेरा खोया हुआ धन वापस मिल गया और शहर में ठहरने का एक ठिकाना भी। आप के उपकार का बदला मैं कैसे चुका पाऊँगा?"

"मेरी बेटी तरंगिणी से शादी करके।" बालमुकुन्द ने कहा। "तुम्हारी सरलता और मेरी बेटी की बुद्धिमता का संयोग सोने पर सुहागा जैसा होगा।"

अपने इतने बड़े अचानक आये सौभाग्य पर उसे सहसा विश्वास नहीं हुआ। उसके मुँह से अचानक निकल पड़ा,-"पानी, प्यास लगी है।"

"अभी लाई।" खुश होती हुई तरंगिणी दौड़ कर पानी ले आई।

सर्जनात्मक स्पर्द्धाएँ

दूर का ढोल सुहावन

पावली गाँव का कुदरत अली लकड़ी के कामों का अच्छा कारीगर था। आस-पास के गाँवों के जमीन्दार भी अपने पलंग और कुर्सियाँ उसी से बनवाते थे। उसकी कारीगरी की सभी तारीफ करते। लेकिन फिर भी खाने-पीने से ज्यादा कभी नहीं बचता। रात-दिन मेहनत करने के बावजूद बस, बीबी और चार बच्चों का गुजारा हो रहा था। बड़ी लड़की की शादी की चिंता उसे खाये जा रही थी।

कुछ लोगों से उसने सुन रखा था कि अरब देश में लकड़ी के कारीगरों की जरूरत है और वहाँ यहाँ से दस गुनी मजदूरी है। बहुत से लोग वहाँ जाकर काफी पैसा कमा चुके हैं। कुदरत अली ने सोचा कि क्यों नहीं मैं भी साल दो साल के लिए वहाँ चला जाऊँ और कुछ धन कमा कर ले आऊँ । यहाँ तो लड़कियों की शादी के लिए कभी पैसा नहीं जुटा पाऊँगा।

यह सोच कर वह एक दिन राजधानी गया और एक राज कर्मचारी से मिला। कुछ रुपये लेकर वह अरब देश जाने के लिए वहाँ के राजा का आदेश मंगवा देता था। कुदरत अली ने अपना घर गिरवी रख कर साहूकार से कुछ रुपये उधार लिये और अरब देश के राजा की आज्ञा का इन्तजाम कर लिया।

फिर एक दिन अपनी बीवी और बच्चों को समझाते हुए कहा,- "तुम लोग घबराना नहीं। मैं जिस मुल्क में जा रहा हूँ, वहाँ सोना बरसता है। मैं जाते के साथ तुमलोगों के खर्चे-पानी के लिए कुछ रुपये भेज दूँगा। एक साल के बाद काफी सोना और धन लेकर लौटूँगा और बड़ी बिटिया चाँद की धूम धाम से शादी करूँगा।"

इतना कह कर वह अरब देश चला गया।

जब कुदरत अली अरब देश पहुँचा तो उसके ठहरने-खाने का कोई ठौर-ठिकाना नहीं था। वह हर रोज काम की तलाश करता और रूखा-सूखा खाकर कहीं सड़क किनारे सो जाता। इस प्रकार महीना बीत गया, लेकिन कारीगर का कोई काम न मिला. जहाँ नई इमारतें बनती दिखाई देतीं, वहाँ पहले से कारीगर मौजूद होता। उनके औजार भी नई किस्म के होते। इसके औजार पुराने जमाने के थे, जिनसे बारीक नक्काशी नहीं हो सकती थी। इसलिए उसे कहीं काम नहीं मिला।

उसने जो सपना देखा था, वह टूट गया। अकेलापन उसे काटने लगा। बीवी-बच्चों की चिंता उसे अलग सता रही थी। उनका खर्चा-पानी कैसे चल रहा होगा। स्वयं दूर देश में पड़ा हुआ है, जहाँ कोई अपना नहीं।

एक दिन अचानक उसकी भेंट मुल्ला खान से हो गई। वह उसके पड़ोसी गाँव का रहनेवाला था और यहाँ राज मिस्त्री का काम करने आया था। लेकिन उसे जब राज का काम नहीं मिला तो वह भी मजदूरी करके गुजारा करने लगा। नगर के बाहर एक बहुत बड़ी। इमारत बन रही थी। उसी इमारत पर मुल्ला खान मजदूर का काम कर रहा था। कुदरत अली भी काम ढूंढने उसी इमारत पर गया था।

उस दिन से दोनों एक साथ काम करने और रहने-खाने लगे। एक दिन कुदरत अली ने मुल्ला खान से कहा, - "भैया, मैं तो अपने बीवी-बच्चों को अल्लाह के भरोसे छोड़ कर आ गया हूँ। उन्हें कह कर आया था कि यहाँ पहुँचते ही कुछ धन भेज दूँगा। लेकिन यहाँ तो जैसा सोचा था वैसा हुआ नहीं। पता नहीं, वे किस हाल में होंगे। मैं तो जल्दी ही घर लौट जाना चाहता हूँ।" यह कहते-कहते कुदरत अली की आँखें भीग आईं।

उसके इस हाल पर मुल्ला खानको तरस आ गया। "तुम चाहो तो मुझ से कुछ धन लेकर घर पर भेज दो और दो-चार महीने काम करने के बाद जब हाथ में कुछ पैसे हो जायें, तो घर लौट जाना।" मुल्ला खान ने कहा।

कुदरत अली ने मुल्ला खान से कुछ पैसे लेकर घर पर भेज दिया और उस मदद के लिए उसे शुक्रिया अदा की।

उसने दो महीने किसी तरह मजदूरी का काम किया और दो महीनों की मजदूरी लेकर घर लौट आया।

घर पर उसके बच्चे भूख से बीमार पड़ गये ते। उसके घर लौटते ही उसके बीवी बच्चे उससे लिपट कर और बिलख-बिलख कर रोने लगे। उसने भी अरब देश का अनुभव जब अपनी बीवी को सुनाया तो उसकी बीवी ने कहा, -"दूर का ढोल सुहावन लगता ही है। अब तो आप को समझ में आ गया न।"

महाभारत

दुर्योधन के पूछने पर पितामह ने दोनो पक्षों के योद्धाओं का सविस्तर विवरण दिया। शिखंडी के विषय में बताते हुए उन्होंने कहा कि मैं उसे नहीं मार सकता। यदि वह मेरे साथ युद्ध करने आ भी जाये तो मैं उस पर शस्त्र नहीं उठाऊँगा।

इस पर दुर्योधन ने पुन: प्रश्न करते हुए कहा, - ''आपने तो कहा था कि युद्ध में सभी शत्रुओं का नाश कर दूँगा। फिर आप यह क्यों कहते हैं कि आप शिखंडी को नहीं मारेंगे।

इसका उत्तर देते हुए पितामह ने कहा, - ''इसका कारण विस्तारपूर्वक बताता हूँ। यहाँ उपस्थित सभी राजा भी ध्यानपूर्वक सुनें।

मेरे पिता महाराज शान्तनु ने दीर्घ काल तक राज्य किया। उनकी मृत्यु के पश्चात मैंने चित्रांगद को सिंहासन पर बिठाया। उसकी असमय मृत्यु हो जाने के कारण मेरी देखरेख में विचित्रवीर्य ने राज्य संभाला। जब विचित्रवीर्य विवाह हो गया तो मुझे चिंता होने लगी। वह इतना शक्तिशाली नहीं था कि स्वयं अपने लिए किसी राजकुमारी का हरण कर ले।

उसी समय काशिराज ने अपनी तीनों राजकुमारियों के लिए स्वयंवर का आयोजन किया। उनके नाम थे - अम्बा, अम्बिका और अम्बालिका। स्वयंवर में सभी राजाओं को आमंत्रित किया गया था। विचित्रवीर्य इतना समर्थ नहीं था, इसलिए मैं अकेला अपने रथ पर काशी गया। तीनों राजकुमारियों का सौन्दर्य अनुपम था। मैंने वहाँ उपस्थित सभी राजाओं को ध्यान से देखा और उनकी शक्ती का अनुमान लगाया। फिर तीनों राज कुमारियों को अपने रथ पर बैठा कर सभी उपस्थित राजाओं को ललकारते हुए कहा, - ''मैं महाराज शान्तनु का पुत्र भीष्म हूँ। मैं तीनों राजकुमारियों

को अपने रथ पर बिठा कर लिये जा रहा हूँ। किसी में इतना बल और सामर्थ्य हो तो मुझे रोक लो और इन राजकुमारियों को मुझ से छुड़ा लो।''

इस पर वहाँ उपस्थित सभी राजाओं ने मुझ पर एक साथ आक्रमण कर दिया। उन्होंने अपने - अपने रथों, अश्वों और हाथियों पर सवार हो मुझे चारों ओर से घेर लिया। लेकिन मेरे बाणों की वर्षा के सामने वे टिक न सके और रणभूमि से भाग गये।

मैंने उन तीनों कन्याओं को माँ सत्यवती को सुपुर्द करते हुए कहा, - ''माँ, मैंने काशिराज की तीनों कन्याओं का हरण कर लिया है । ये विचित्रवीर्य की रानियाँ बनेंगी । इनके विवाह की तैयारियाँ कीजिये ।''

माँ सत्यवती बहुत प्रसन्न हुई ।
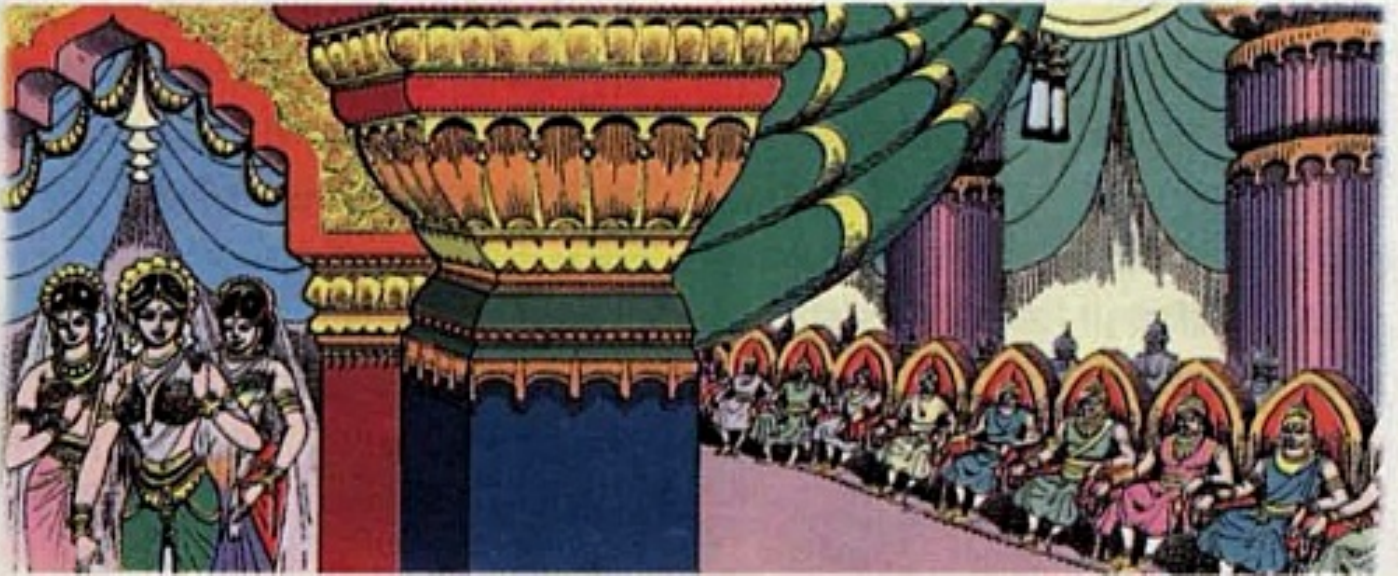
विवाह की जब तैयारियाँ होने लगीं तब काशिराज की ज्येष्ठ पुत्री अम्बा ने मुझ से कहा, - ''मैं साल्वराज से प्रेम करती हूँ और वे भी मुझे चाहते हैं । हम दोनों परिणय बंधन के लिए सहमत हैं। किन्तु मेरे पिता इस रहस्य को नहीं जानते । मेरी आप से प्रार्थना है कि मुझे साल्वराज के पास भेज दें।''

मैंने माता सत्यवती और पुरोहितों से परामर्श लेकर अम्बा को सम्मान के साथ साल्वराज के पास भेज दिया।

किन्तु साल्वराज ने उसे पत्नी बनाने से इनकार करते हुए कहा , - ''जिसे भीष्म बलपूर्वक हरण करके अपने साथ ले गया हो, उसे स्वीकार नहीं कर सकता। तुम पर उसी का अधिकार है। यदि वह तुमसे विवाह नहीं करना चाहता तो तुम स्वतंत्र हो और जहाँ चाहो जा सकती हो।''

अम्बा ने उससे बहुत प्रार्थना की किन्तु साल्वराज टस से मस नहीं हुआ। अम्बा ने सोचा कि साल्व ने उसे इसलिए ठुकरा दिया कि मैंने उसका हरण किया था। इसलिए मुझसे घृणा करने लगी और उसने मुझसे प्रतिशोध लेने की प्रतिज्ञा की।

साल्वराज से ठुकराये जाने के बाद अम्बा ने शैखावत्य त्रृषि के आश्रम में जाकर उनसे अपनी व्यथा बताई । मुनि ने कहा कि यहाँ तपस्वी रहते हैं जो तुम्हारी सहायता करने में असमर्थ हैं। अम्बा ने कहा कि मैं अपने जीवन से निराश हो चुकी हूँ और मैं भी तपस्या करना चाहती हूँ । मुझे भी तपस्या की विधि बतायें ।

त्रृषि-मुनियों ने उसे अपने पिता काशिराज के पास चले जाने का परामर्श दिया । पर अम्बा अपने हठ पर अड़ी रही।

तभी उस आश्रम में होत्रवाहन नाम के एक राजर्षि आये। वे अम्बा के नाना थे। उन्होंने अम्बा की दुखद कथा सुन कर कहा, - "पुत्री, तपस्या करना तुम्हारी सामर्थ्य से बाहर है। सांसारिक इच्छाएँ तपस्या के मार्ग में बाधक होती हैं। यदि साल्वराज ने तुम्हें इनकार कर दिया है तो भीष्म के पास वापस चली जाओ। परशुराम तुम्हें इस काम में सहायता कर सकते हैं। वे तुम्हें भीष्म के पास पहुँचा देंगे। यदि भीष्म ने तुम्हें स्वीकार नहीं किया तो वे उसे बाध्य कर सकते हैं और आवश्यकता पड़ने पर इसके लिए उससे युद्ध भी कर सकते हैं।"

परशुराम महेन्द्र पर्वत से दूसरे ही दिन संयोगवश उसी आश्रम में पहुँच गये। अम्बा तथा उसकी सखियों ने उनका स्वागत - सत्कार किया। बातचीत के क्रम में होत्रवाहन ने उन्हें अपनी पौत्री अम्बा की दुख भरी कहानी सुना कर उसकी समस्या का कोई निराकरण करने की प्रार्थना की।

परशुराम ने अम्बा से पूछा, - "पुत्री, तुम भीष्म के पास जाना चाहती हो या साल्वराज के पास? तुम जहाँ भी जाना चाहती हो वहीं पहुँचा दूँगा।"

"भीष्म ही मेरे कष्ट का कारण है। उसी के कारण मेरी यह दुर्गति हुई है। यदि वह मुझे बलपूर्वक हरण न करता तो साल्वराज कभी अस्वीकार नहीं करते। वे मुझसे अब भी उतना ही प्यार करते हैं, लेकिन सामाजिक अपमान के भय से मुझे स्वीकार करने में संकोच करते हैं। मुझे इसलिए भीष्म से घृणा हो गई है और उसके बदले की आग में मैं जल रही हूँ। जब तक मैं भीष्म से प्रतिशोध न ले लूँ मैं शान्ति से नहीं बैठूँगी। मैं भीष्म का वध करने के लिए ही तपस्या करना चाहती हूँ।" अम्बा ने कहा।

इस पर परशुराम ने कहा, - "मैं भीष्म को मार तो नहीं सकता किन्तु यदि वह तुम्हें स्वीकार नहीं करता तो उससे युद्ध कर सकता हूँ।"

वे कुछ ऋषियों के साथ सरस्वती नदी के किनारे आकर कुरुक्षेत्र में ठहरे और मुझे सन्देश भेजा।

मैं एक गाय और कुछ ब्राह्मणों के साथ उनसे मिलने गया और उनका यथोचित सत्कार किया। परशुराम ने मुझसे कहा, - "भीष्म, तुमने तो आजीवन अविवाहित रहने की प्रतिज्ञा की है। फिर तुमने अम्बा का हरण क्यों किया? और यदि किया तो इसे अपने पास क्यों नहीं रखा? तुम्हारे कारण इसका जीवन नष्ट - भ्रष्ट हो गया। भला इससे अब कौन विवाह करेगा? तुम्हारे कारण ही साल्वराज ने इसे ठुकरा दिया। अब तुम्हें ही इसके साथ विवाह करना होगा।"

तब मैंने उन्हें समझाने का प्रयास करते हुए कहा, - "मैंने अपने भतीजे विचित्रवीर्य के साथ विवाह करनेके लिए काशिराज की तीनों राजकुमारियों का हरण किया था। मैंने अपने लिए इन राजकुमारियों का हरण नहीं किया, यह सबको स्पष्ट बता चुका हूँ। मेरी अविवाहित रहने की प्रतिज्ञा अटल है। मैं किसी भी परिस्थिति में विवाह नहीं करूँगा चाहे इसके लिए मुझे इन्द्र से भी युद्ध क्यों न करना पड़े। जब अम्बा ने शाल्वराज के पास जाने और उसी से विवाह करने की इच्छा प्रकट की तो उसे सम्मान के साथ उनके पास भेज दिया। अब यदि शाल्वराज ने इसे ठुकरा दिया तो इसमें मेरा क्या दोष है।"

मेरी बातों से उन्हें क्रोध आ गया। उन्हों ने मुझे चेतावनी देते हुए कहा कि यदि मैंने अम्बा से विवाह नहीं किया तो वे मुझे मार डालेंगे।

मैं उनसे युद्ध करना नहीं चाहता था वे हमारे गुरु थे, इसलिए मैंने उन्हें स्मरण दिलाते हुए कहा कि आप मेरे गुरु हैं और आपने ही मुझे युद्ध विद्या के साथ-साथ अस्त्र-शस्त्र भी प्रदान किये हैं। तब उन्होंने कहा कि मैं तुम्हारा गुरु हूँ तो मेरी आज्ञा का पालन करो।

तब मैंने उन्हें स्पष्ट कर दिया कि मैं किसी भी परिस्थिति में अपनी प्रतिज्ञा भंग करके अधर्म नहीं करूँगा और इसके लिए यदि मुझे आप से युद्ध भी करना पड़े तो पीछे नहीं हटूँगा।

युद्ध के लिए उनके हठ पर मुझे उनके साथ युद्ध करने के लिए सहमत होना पड़ा। कुरुक्षेत्र में युद्ध की तैयारी होने लगी।

युद्ध प्रारंभ होने से पूर्व मैं ने हस्तिनापुर आकर माता सत्यवती को सब कुछ बताया और उनका आशीर्वाद लेकर कुरुक्षेत्र पहुँचा। परशुराम वहाँ पहुँच चुके थे और युद्ध करने के लिए मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे। हम दोनों का युद्ध देखने के लिए अनेक ऋषि-मुनि गण भी वहाँ पहुँच गये।

हम दोनों में घोर युद्ध हुआ। चौबीस घंटों तक लगातार युद्ध के बाद उन्होंने हार मान ली। फिर अम्बा से कहा, - "देख लिया न, मैं भीष्म को मार नहीं सकता। तुम स्वयं इसकी शरण में चली जाओ।"

लेकिन ऐसा करने से अम्बा ने इनकार कर दिया और मुझे मार कर बदला लेने के लिए यमुना तट पर तपस्या करने चली गई। वहाँ उसने बारह वर्षों तक घोर तपस्या की। उसके भाई उसे विपदा से बचाने के लिए अपने घर ले जाना चाहते थे। इसलिए उन्होंने उसकी तपस्या भंग करने की बहुत कोशिश की।

फिर भी वह एकाग्र चित्त होकर तपस्या में लीन रही। उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर शिव प्रकट हो गये और वर माँगने को कहा। अम्बा ने मुझे युद्ध में हराकर मेरा वध करने का वरदान माँगा।

शिव ने वरदान देते हुए कहा, - ''अगले जन्म में स्त्री के रूप में तुम्हारा जन्म होगा। लेकिन कालान्तर में पुरुषत्व प्राप्त करने के बाद युद्ध में भीष्म को वध कर सकने में सफलता मिलेगी।''

अम्बा मुझसे शीघ्रातिशीघ्र बदला लेना चाहती थी। इसलिए वह उसी क्षण चिता तैयार कर यह कहती हुई उसमें कूद पड़ी कि भीष्म का वध करने के लिए मैं अग्नि में प्रवेश कर रही हूँ।

यही अम्बा दूसरे जन्म में द्रुपद की बेटी शिखंडी बन कर पैदा हुई।

द्रुपद मुझसे युद्ध में हार कर अपमानित हुआ था, इसलिए वह भी मुझसे बदला लेना चाहता था। उसने मुझे वध करनेवाले एक पुत्र की कामना से घोर तपस्या की। शिव ने प्रसन्न होकर वर दिया, - ''भीष्म का अन्त करनेवाला तुम्हारे घर में पहले स्त्री के रूप में जन्म लेकर बाद में पुरुष के रूप में परिवर्तित होगा और युद्ध में उसी के हाथ से भीष्म की मृत्यु होगी।''

कालक्रम में द्रुपद की पत्नी ने एक कन्या को जन्म दिया। लेकिन द्रुपद ने यह घोषणा करवाई कि उसके घर पुत्र पैदा हुआ है। उसने इस तथ्य को रहस्य बनाये रखा और उस कन्या का पालन-पोषण भी पुत्र के समान ही किया, क्योंकि द्रुपद और उसकी रानी को शिव के वरदान में पूर्ण विश्वास था। शिशु का नाम शिखंडी रखा गया।

शिखंडी जन्म से ललित कलाओं की प्रतिभा के साथ-साथ युद्ध कला में भीदक्ष थी। उसने पुरुष वेश में जाकर द्रोणाचार्य के पास धनुर्विद्या का अभ्यास किया।

अब तक वह विवाह के यौग्य पूर्ण विकसित युवती हो चुकी थी। द्रुपद को अब यह चिंता होने लगी कि इसका विवाह किससे करें, पुरुष से या स्त्री से, क्यों कि शिव के वरदान के अनुसार उसे कभी-न-कभी पुरुष होना है। किन्तु अभी तक स्त्री है। अपनी पत्नी के परामर्श के अनुसार उसने उसका विवाह स्त्री से ही करने का निर्णय लिया। अब तक इस रहस्य को बाहर प्रकट नहीं किया गया था।

दशार्ण के राजा हिरण्यरोम की पुत्री का नाम भी शिखण्डी था। उसने बड़ी प्रसन्नता के साथ अपनी पुत्री शिखंडीका विवाह, द्रुपद की पुत्री को

पुत्र समझुत कर उसके साथ, कर दिया। दोनों शिखंडियों का विवाह सम्पन्न हो गया।

लेकिन दशार्ण राजा की पुत्री को यह जानने में देर नहीं लगी कि उसका तथाकथित पति भी स्त्री ही है। जब यह बात उसके पिता तक पहुँची तो वह क्रोधित हो उठा। उसने द्रुपद को यह सन्देश भेजा कि तुमने धोखे से बेटा कहकर अपनी बेटी का विवाह मेरी बेटी से करके मेरा जो अपमान किया है, उसका बदला लेने के लिए मैं अपनी सेना के साथ तेरा सर्वनाश करने आ रहा हूँ।

राजा द्रुपद और उसकी रानी यह सन्देश पाकर भयभीत हो गये। उसमें इतनी शक्ति नहीं थी कि वह दशार्ण राज का सामना कर सके। इसके अतिरिक्त, शिखंडी का रहस्य प्रकट हो जाने पर अन्य राजा उसकी हँसी उड़ायेंगे। इस अपमान की कल्पना से ही उसके रोंगटे खड़े हो जाते थे। शिखंडी को अपने माता-पिता की यह दुरवस्था देखी नहीं गई। इसलिए अपने प्राण त्याग देने के लिए वह वन में चली गयी। वह वन स्थूणापर्ण नाम के एक यक्ष का प्रदेश था।

शिखंडी ने उस वन में अन्न-जल का त्याग करके अपना प्राणान्त करने का निश्चय किया। उसकी यह हालत देख कर यक्ष ने पूछा,-"देवि! तुम कौन हो और इस यक्ष-वन में आने का तुम्हारा प्रयोजन क्या है।"

शिखंडी ने निराश होकर कहा कि मेरा कष्ट असाध्य है और इसका निराकरण संभव नहीं है। तब यक्ष ने अपना परिचय देते हुए कहा कि मैं कुबेर का मित्र हूँ और वर देकर तुम्हारी विपदा का समाधान कर सकता हूँ।

शिखंडी ने तब अपनी और अपने माता-पिता पर आई विपदा का पूरा विवरण सुना दिया।

यक्ष को उसकी दयनीय अवस्था पर दया आ गई। उसमें इतनी शक्ति नहीं थी कि उसे वर देकर स्थायी रूप से पुरुषत्व प्रदान कर सके। लेकिन कुछ दिनों के लिए अपना पुरुषत्व देने भर की शक्ति उसमें थी।

"कुछ समय के लिए मैं तुम्हें अपना पुरुषत्व देता हूँ और तुम्हारा स्त्रीत्व ले लेता हूँ। जैसे ही तुम्हारे पिता पर आई विपदा टल जाये तो तुम मेरा पुरुषत्व लौटा कर अपना स्त्रीत्व ले लेना। इस प्रकार मैं तात्कालिक रूप से तुम्हारी सहायता कर सकता हूँ।" शिखंडी की सहायता करने की दृष्टि से यक्ष ने कहा।

शिखण्डी तत्काल मान गयी और पुरुष शिखण्डी बन कर वह बड़े आनन्द के साथ अपने माता - पिता के पास वापस आ गया।

द्रुपद के आनन्द की सीमा न रही। उसने दशार्ण राजा को यह सन्देश लिख कर भेजा, - "मेरा पुत्र शत प्रति शत पुरुष है। सन्देह हो तो आप स्वयं आकर परीक्षा ले लें।"

दशार्ण राजा ने कुछ विश्वस्त दासियों को भेज कर इस बात की सचाई का पता लगाया और जब उसे विश्वास हो गया कि द्रुपद का पुत्र शिखंडी पुरुष है तो अपनी पुत्री को उसे सौंप दिया और अपनी पूर्व धारणा पर खेद प्रकट करते हुए द्रुपद से क्षमा माँगी।

इसी बीच कुबेर एक दिन अपने विमान से स्थूणापर्ण के वन में पहुँचा। स्त्री बन जाने के कारण स्थूणापर्ण कुबेर से मिलने नहीं आया तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। कुबेर के दूतों ने जब उसे स्त्री के रूप में उसके सामने उपस्थित किया तो उसने स्त्री बनने का कारण पूछा। कारण बताने पर कुबेर स्थूणा पर्ण पर क्रोधित हो उठा और उसे सदा स्त्री बने रहने का शाप दे दिया। स्थूणापर्ण के शाप मुक्त होने की बहुत प्रार्थना करने पर कुबेर ने कहा कि शिखण्डी की मृत्यु के परचात वह पुनः पुरुशष बन जायेगा।

उधर शिखण्डी पुरुष के रूप में आनन्दपूर्वक वैवाहिक जीवन व्यतीत करने लगा। राजा द्रुपद और रानी भगवान शिव के वरदान के सच होने पर बड़े प्रसन्न हुए। लेकिन कुछ दिन बीत जाने पर शिखण्डी को यक्ष को दिया हुआ वचन याद आया और वह फिर उदास हो गया।

कुछ दिनों के पश्चात उदास मन से ही शिखण्डी वचन के अनुसार स्थूणा पर्ण को उसका पुरुषत्व वापस करने आया। किन्तु कुबेर के शाप के कारण स्थूणा पर्ण शिखण्डी से अपना पुरुषत्व वापस न ले सका। इस प्रकार शिखण्डी उसके बाद आजीवन पुरुष ही बना रहा।

भीष्म पितामह ने दुर्योधन को शिखण्डी का वृतान्त सुनाते हुए कहा, - "अम्बा ही, मुझे मारने का प्रण लेकर शिखण्डी बन कर आई है, जैसा कि मैं कह चुका हूँ। मेरा व्रत है कि मैं स्त्री या स्त्री नाम धारी या स्त्री-चरित्र वाले व्यक्ति पर शस्त्र नहीं उठाता। इसी कारण मैं न शिखण्डी से युद्ध कर सकता हूँ न उसे मार सकता हूँ।"

सच्ची जीत

एक दिन शाम के समय निरंजनवर गाँव के बाहर एक चबूतरे पर चार युवक किसी विषय पर चर्चा कर रहे थे।

भूषण ने कहा,-"मनुष्य के लिए कोई भी कार्य असंभव नहीं है। यदि वह पूरी सचाई और लगन से प्रयास करे तो कठिन से कठिन कार्य भी उसके लिए सरल हो जायेगा।"

"जो कार्य संभव नहीं है, उसे मनुष्य कितनी भी सचाई से करे, पूरा नहीं कर सकता।" दयानिधि ने अपनी असहमति प्रकट करते हुए कहा।

चर्चा ने गंभीर रूप धारण कर लिया। यहाँ तक कि बाजी लग गई।

दयानिधि ने कहा, -"तुम्हारे पिता जी चुरुट के बिना एक पल भी नहीं रह सकते। उन्हें चुरुट छुड़ाना असंभव है। यदि तुम इसे संभव कर दो तो तुम्हें सौ अशर्फियाँ दूँगा।" अन्य दो मित्रों ने दयानिधि का समर्थन किया।

भूषण थोड़ी देर चुप रहा। फिर बोला,-"मुझे तुम्हारी चुनौती स्वीकार है। लेकिन मैं इसे तुम्हारी सौ अशर्फियों के लिए स्वीकार नहीं कर रहा हूँ, बल्कि यह सिद्ध करने के लिए कि यह असाध्य नहीं है। चाहे मुझे कुछ भी करना पड़े, मैं इसे संभव करके दिखा दूँगा।"

दूसरे दिन भूषण अपने पिता से मिला। उसने धूम्रपान की बुराइयाँ गिनाते हुए कहा,-"चुरुट पीने से आयु घट जाती है, तरह-तरह की असाध्य बीमारियाँ हो जाती हैं और मनुष्य असह्य पीड़ा झेलते हुए असमय ही मृत्यु का शिकार हो जाता है।''

भूषण का पिता माधव एक भला आदमी था। लेकिन उसे बातचीत करने और चुरुट पीने का बहुत शौक था। वह बहुत वाक्-पटु था। वह बातचीत करता जाता और लगातार बिना रुके एक के बाद एक सुलगाता और पीता जाता।

उसने अपने बेटे की बात ध्यानपूर्वक सुनी। यद्यपि वह चुरुट की सभी खामियों से परिचित

था, फिर भी उसने अपनी आदत को उचित बताते हुए कहा,-"देखो बेटे, जिन्दगी और मौत हमारे हाथ में नहीं है। भाग्य में जो लिखा है, वह घटित होगा ही। जिस घड़ी जिसे मरना है, उसे बचाना असंभव है। जो चुरुट नहीं पीते, क्या वे असमय नहीं मरते?

"हाँ, स्वास्थ्य के लिए हानिकारक अवश्य है, यह मानता हूँ। लेकिन चुरुट पीने से हमें जो आनन्द मिलता है, वह अच्छी तन्दुरुस्ती के आनन्द से कहीं अधिक है। फिर मैं क्यों ऐसा जीवन जीऊँ जो नीरस और निरानन्द हो। यह तो बेवकूफी होगी। इसलिए मुझे तो मेरे हाल पर छोड़ दो।"

इतना कह कर उसने एक दूसरा चुरुट सुलगाया और कहा,-"चुरुट पीना मेरे लिए साँस लेने के समान है। जैसे ही यह बन्द होगा, मेरी साँस भी बन्द हो जायेगी।"

भूषण को लगा कि सचमुच यह असंभव कार्य है। वह निराश हो गया और सोचने लगा कि इनके मन में यह गलत विचार घर कर गया है कि ये चुरुट के बिना जिन्दा नहीं रह सकते। इस विचार को हटाना होगा। इसलिए उसने फिर कहा, -

"यह आप की महज धारणा है, पिता जी। धारणाएँ हालात के अनुसार टूटती-बनती रहती हैं। ऐसी कोई आदत नहीं जो छूट नहीं सकती। जरूरत है संकल्प की। आप चाहें तो इससे आजाद हो सकते हैं।''

"मैं तो इसे चाह कर भी नहीं छोड सकता।" माधव ने चुरुट का कश लेते हुए कहा।

भूषण कुछ सोच कर बोला,-"अच्छा पिता

जी, मान लीजिये कोई आप को चुरुट छोड़ने पर एक लाख अशर्फियाँ दे तो आप क्या करेंगे?"

"छोड़ दूँगा। लेकिन कौन बेवकूफ मुझे लाख अशर्फियाँ दे देगा?''

"इसका यह साफ मतलब हुआ कि आप चाहें तो अवश्य छोड़ सकते हैं।" आशा और उत्साह के साथ भूषण ने कहा।

"और यदि कोई आप के गले पर चाकू रख कर यह कहे कि चुरुट छोड़ दो वरना गला काट दूँगा, तब?"

"कह दूँगा कि छोड़ दूँगा। वह कब तक गले पर चाकू रख कर खड़ा रहेगा। उसके जाते ही फिर पीना शुरू कर दूँगा।" हँसते हुए माधव ने कहा।

इस पर भूषण दुखी, व्याकुल और उदास हो गया। उसने नाराज और क्षुब्ध होकर कहा,-"आप

मेरी बातों को गंभीरतापूर्वक नहीं ले रहे हैं, पिता जी। आप भगवान की दी हुई इस अनमोल जिन्दगी से खिलवाड़ नहीं कर सकते। आप यदि चुरुट पीना नहीं छोड़ेंगे तो मैं कुछ भी कर सकता हूँ।" इतना कह कर वह वहाँ से उठ कर चला गया।

भूषण ने उस दिन खाना नहीं खाया। माँ के लाख मनाने पर भी अपनी जिद पर अड़ा रहा। जब माधव को यह मालूम हुआ तो उसने पत्नी को समझते हुए कहा, "भूख लगने पर वह अपने आप ही खा लेगा। कोई कब तक भूखा रह सकता है? चिन्ता न करो।"

कई दिन हो गये लेकिन भूषण निराहार सारा काम करता रहा। एक दिन वह किसी काम से किसी अन्य गाँव में गया और कई दिनों पर लौटा। वहाँ भी उसने कुछ नहीं खाया।

दिनोंदिन उसका स्वास्थ्य बिगड़ने लगा। चेहरा पीला पड़ गया। आँखें धँस गईं। मुखमंडल पर विषाद की गहरी छाया छा गई। लगता था महीनों से बीमार है। फिर भी काम करता रहता।

भूषण की हालत देख कर उसकी माँ ने भी खाना-पीना बन्द कर दिया। दोनों की हालत गंभीर हो गई। माँ ने तो खाट पकड़ ली।

घर-बाहर के लोग इसके लिए माधव को दोषी ठहराने लगे। कहने लगे, - बेटा के सिगरेट - चुरुट पीने पर बाप को नाराज होते सुना था, लेकिन बाप के चुरुट पीने पर बेटे को नाराज होते पहली बार सुन रहा हूँ। माधव को लोगों की परवाह नहीं थी, लेकिन बेटे और पत्नी की दशा देख कर उसका हृदय पसीज गया। वह चुरुट के वास्ते बेटे और पत्नी को खोना नहीं चाहता था।

''यदि बेटे को कुछ हो गया तो.....'' यह सोच कर उसका हृदय काँप गया।

उसने तम्बाकू का गट्ठर गली की नाली में फेंक दिया और भूषण को गले लगाते हुए कहा,-"तुम जीत गये बेटे। मैं हार गया। जाओ, अब खाना खा लो।"

"सच्ची जीत तो आप की है, पिता जी! चुरुट रूपी दैत्य पर आपने विजय पा ली है। अब आप आनन्द के लिए चुरुट की आदत पर निर्भर नहीं हैं। अब आप स्वतंत्र हैं।"

कठिन और असंभव लगनेवाले इस कार्य को सम्पन्न होते देख पिता-पुत्र दोनों ने अपार आनन्द का अनुभव किया।

भोन्दू

कावेरी के तट पर ब्राह्मणों के एक गाँव में गोवर्धन नाम का एक गरीब रहा करता था। उसके बहुत दिनों बाद एक पुत्र हुआ। माँ बाप ने उस लड़के का नाम श्रीवर्धन रखा। छुटपन से ही वह जरा भोन्दू-सा था। जहाँ बैठ जाता, वहीं बैठे रहता। जब तक कोई न उठाता, तो वह न उठता। बुलाने पर आता, और 'जाओ' कहने पर चला जाता। आखिर उसे सुलाने के लिए भी किसी न किसी को कहना पड़ता-"सो जाओ।"

यह सोच कर कि पढ़ाना लिखाना शुरू कर देने से उसका भोन्दूपन जाता रहेगा, पिता ने श्रीवर्धन को गुरुकुल भेज दिया। वह बारह वर्ष गुरु के पास रहा, फिर भी वह बिलकुल न बदला। वह बुद्धू था पर आलसी न था।

जब बारह वर्ष की शिक्षा के बाद भी श्रीवर्धन के पिता ने उसमें कोई परिवर्तन न देखा तो वह उससे घर के काम ही करवाने लगा। उसकी माँ की नज़र जाती रही। उसके पिता को रसोई तक करनी पड़ती। लड़के को जब तक वह कुछ काम करने के लिए कहता नहीं, तब तक वह कुछ नहीं करता था। हर काम के लिए कहते-कहते वह तंग आ जाता था और क्रोध करने लगता था।

''अगर सयाने लड़के की शादी कर दी तो उसकी पत्नी ही उससे कहकर सब काम करवा लेगी और हर रोज़ उसे कम से कम अंगुलियाँ तो नहीं जलानी पड़ेंगी?'' यह सोच गोवर्धन ने अपने लड़के का एक बुद्धिमान लड़की से विवाह कर दिया।

पत्नी के घर आ जाने के कारण श्रीवर्धन के लिए कुछ भी करने को न रहा। वह हमेशा एक ही जगह बैठा रहता। श्रीवर्धन की पत्नी से उसके ससुर ने कहा,- "तुम अपने पति को कुछ काम बताकर अपना काम कर लिया करो न?'' उसने कह तो दिया था, पर वह अपने पति को कुछ न कहती और सब काम स्वयं कर लिया करती।

अपने लड़के को हमेशा मिट्टी के माधो की तरह बैठा देख पिता ने श्रीवर्धन से कहा,-"पूछ लो न

पचीस वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

कि तुम्हारी पत्नी क्या काम करवाना चाहती है। क्यों नहीं कुछ काम करते?"

श्रीवर्धन ने पत्नी के पास जाकर पूछा,-"अगर कोई काम हो तो बताओ, मैं कर दूँगा।"

"बड़े लोग काम बताते हैं और छोटे लोग करते हैं। सासजी से पूछ कर देखिये कि कहीं कोई काम तो नहीं है।" पत्नी ने कहा।

श्रीवर्धन ने माँ के पास जाकर कहा,-"माँ, अगर कोई काम हो तो बताओ। कर दूँगा।"

"मैं तो अन्धी हूँ। मुझे क्या मालूम? तुम अपने पिताजी से पूछो।" माँ ने कहा।

"मेरी पत्नी और मेरी माँ मुझे कोई काम नहीं बता रहे हैं। क्या करूँ, आप ही कुछ काम बतायें।" श्रीवर्धन ने पिता से कहा।

"मेरी फूटी किस्मत की वजह से ही तुम मेरे घर पैदा हुए। क्या तुम स्वयं नहीं सोच सकते कि क्या काम पड़ा है। घर में कोई काम न हो तो धन कमाने के लिए कोई नौकरी कर लेते। इतने वर्षों तक गुरुकुल में शिक्षा पाई है। घर पर कुछ बच्चों को बुला कर पढ़ा ही देते। कुछ तो आय हो जाती। नहीं तो किसी मन्दिर में पूजा-पाठ ही कर देते। यदि तुम्हें कुछ समझ में नहीं आता तो मैं क्या बताऊँ। जाओ, भगवान की तपस्या करो। भगवान पसीज उठेंगे, तो कोई वर दे देंगे।" पिता ने खिझकर कहा।

श्रीवर्धन वन में जाकर तपस्या करने लगा। कुछ समय बाद, भगवान उसके समक्ष प्रकट हुए। और बोले, "मैं तुम्हारी तपस्या से सन्तुष्ट हूँ। कहो, क्या वर चाहते हो?"

"क्या वर माँगना चाहिए, यह तो मुझे मालूम नहीं है। घर जाकर अपने घरवालों से पूछने दीजिये। आप तब तक यहीं रहिये..." यह कह कर, श्रीवर्धन खुशी खुशी घर गया और उसने पिता से कहा, "जैसा आपने कहा था, मैंने तपस्या की। भगवान ने प्रत्यक्ष होकर मुझ से वर माँगने के लिए कहा। क्या वर माँगने के लिए आप कहते हैं?"

पिता को अपने बेटे के भोंदूपन पर क्रोध आ गया। उसने बेटे को डाँट कर कहा, -

"क्यों नहीं माँगा कि ढेर-सा ऐश्वर्य चाहिए। छुटपन से हमारी ज़िन्दगी गरीबी की ही तो रही है।" इतने में मां ने लड़के की बात सुनी। उसने बेटे को अपने पास बुला कर कहा, "तुम भगवान से कहो कि मेरी नज़र मुझे फिर मिल जाये।"

जब पत्नी को मालूम हुआ कि उसके पति को भगवान के दर्शन हुए हैं तो उसने उसे अलग ले जाकर कहा,-"माँगिये कि हमें सन्तान मिले।"

उपदेश से किसी के स्वभाव को परिवर्तित नहीं किया जा सकता, क्योंकि अत्यधिक गरम किया गया जल भी अपने शीतल स्वभाव में लौट आता है।

- पंचतंत्र

सब से "अच्छा, अच्छा" कहकर श्रीवर्धन उस जगह भागा-भागा गया, जहाँ उसने तपस्या की थी। पर वहाँ भगवान नहीं दिखाई पड़े। वह भगवान के लिए इधर उधर भाग-भाग कर देखने लगा। उसे एक जगह एक मुनि तपस्या करता दिखाई पड़ा।

''जो भगवान मुझे कुछ समय पहले प्रत्यक्ष हुए थे, क्या इस ओर गये हैं?" उसने मुनि से पूछा।

यह सुनकर मुनि को आश्चर्य हुआ। उसने श्रीवर्धन से पूरी जानकारी ली। सब सुनकर मुनि ने कहा,-"जब भगवान प्रत्यक्ष हुए थे, तो तुमने वर क्यों नहीं माँगे? उस भगवान से वर न माँगकर तुम घर चले गये थे। कहीं मर क्यों नहीं गये? अभागा कहीं का। हम कितने वर्षों से तपस्या कर रहे हैं फिर भी भगवान दर्शन नहीं देते। और तुम्हें दर्शन दिये तो तुमने कोई वर नहीं माँगा।'' उसने क्रोधित होकर कहा।

श्रीवर्धन मुनि के कथनानुसार कही मरने के लिए जगह खोजने लगा। थोड़ी दूरी पर उसे एक सीधा पहाड़ दिखाई दिया। उस पर से कूदकर मरने के लिए श्रीवर्धन उस पहाड़ पर चढ़ने लगा।

आधे रास्ते में एक शिकारी मिला। उसने श्रीवर्धन से कहा,-"पहाड़ पर तो कुछ भी नहीं है, क्यों चढ़ रहे हो?"

''ऊपर से नीचे कूदकर मरने के लिए" यह कहकर श्रीवर्धन ने शिकारी को अपनी सारी कहानी सुना दी।

शिकारी ने सब सुनकर कहा, "तुम भी क्या आदमी हो? भगवान ने तुम से वर चाहने के लिए कहा था, पर क्या उसे तुम्हें बताने के लिए भी कहा था? अगर तुम न बताते तो क्या भगवान को न मालूम होता कि तुम क्या चाहते हो? जाओ, घर जाओ। तुम सब की इच्छाएँ भगवान पूरी कर देंगे।" शिकारी ने कहा।

जब श्रीवर्धन घर आया तो सारा घर ऐश्वर्य से भरा पड़ा था। उसकी माँ की आँखें भी ठीक हो गई थीं। श्रीवर्धन बड़ा खुश हुआ। एक साल बीतते बीतते उसकी पत्नी के सन्तान भी हो गई।

भगवान के दर्शन होने के बाद गाँव वाले उसे महात्मा भोंदू के नाम से पुकारने लगे।

उत्तर सरल था

बहुत पुराने जमाने में एक धनी व्यापारी था। वह बहुत स्वार्थी और कंजूस था।

एक दिन वह सवेरे व्यापार के सिलसिले में किसी सुदूर शहर के लिए रवाना हुआ। उसने अपने साथ चलने के लिए युसुफ नाम के एक युवक को नौकर रख लिया।

"लेकिन मालिक, मैं शायद लम्बे सफ़र की थकान को झेल न सकूं।" युसुफ ने धीरे से कहा।

"कोई बात नहीं। थकान बाँटने के लिए मैं जो साथ हूँ।" व्यापारी ने कहा।

व्यापारी सामान से लदे घोड़े पर सवार होकर चला, जबकि युसुफ आगे-आगे दौड़ने लगा। व्यापारी ने कभी उसे थोड़ी देर के लिए भी घोड़े पर सवार होने का मौका नहीं दिया।

बीच-बीच में थोड़ा आराम करने के बाद ये दिन भर सफर करते रहे। शाम को वे एक ऐसे स्थान पर पहुँचे जहाँ व्यापारी ने रात को रुकने का फैसला किया। तम्बू लगा कर भोजन कर लेने के बाद व्यापारी ने नौकर को घोड़े का जीन उतार कर रखवाली करने को कहा, जबकि वह खुद तम्बू में थोड़ी नींद का आनन्द लेने लगा।

"मालिक, थकान बाँटने का क्या हुआ? क्यों न रात में आधे समय तक मैं सो जाऊँ और आप घोड़े की रखवाली करें।" युसुफ ने अपनी राय रखी।

"बच्चे, मैं तुम्हारी थकान बाँटने की समस्या एक अलग तरीके से हल कर सकता हूँ। तुम्हारे लिए व्यापार का सामान और घोड़ा-दोनों की निगरानी करना काफी मुश्किल होगा। इसलिए तुम तम्बू के बाहर सिर्फ घोड़े की निगरानी करो। मैं तम्बू के भीतर सामान की निगरानी करता हूँ।" व्यापारी ने कहा।

युसुफ ईमानदारी से तम्बू के बाहर एक पेड़ के सहारे बैठ कर पहरा देने लगा। थकावट के कारण उसे नींद आ गई।

अचानक आधी रात में तम्बू के अन्दर से व्यापारी ने आधी नींद में ही पूछा,-"क्या कर रहे हो, युसुफ?"

"मैं सोच रहा हूँ।" हाजिरजवाबी के साथ नौकर ने कहा।

"क्या सोच रहे हो?" व्यापारी ने फिर पूछा।

"हम क्या करें यदि गुलाब तोड़ने के लिए जायें और सिर्फ़ काँटें नज़र आयें।"

"काँटों को छुए बगैर वापस आ जाओ। तुम एक बेशक सावधान पहरेदार हो। शाबाश! मेरे बच्चे।" मालिक ने प्रसन्न होकर कहा और फिर सो गया। दो घंटों के बाद व्यापारी ने फिर पूछा,-"ऐ मेरे खिदमतगार, अब क्या कर रहे हो?"

अलसाई आवाज़ में उसने कहा,-"मैं अभी तक ताज्जुब कर रहा हूँ, मालिक।"

"इस बार किस बात पर ताज्जुब कर रहे हो?"

"आह! यदि सूरज कल नहीं उगने का फैसला कर ले तो क्या होगा?"

"मैं परवाह नहीं करूँगा। जैसे ही भोर होगी, सूरज के उगने का इंतजार किये बिना मैं चल पड़ूँगा।" मालिक ने तसल्ली की आवाज में कहा और फिर नींद में चला गया।

"क्या सुन रहे हो, युसुफ? अब क्या हाल है?"

"मैं अभी भी गहराई से सोच रहा हूँ।"

"अच्छा तो तुम अभी भी सोच रहे हो और ताज्जुब कर रहे हो।" मालिक रात भर घोड़े की सावधानीपूर्वक निगरानी करनेवाले अपने विश्वासी नौकर पर सन्तुष्ट होकर बोला।

"हाँ, सचमुच गहराई से सोच रहा हूँ और ताज्जुब कर रहा हूँ कि कल ओ मेरे मालिक, आपने घोड़े की सवारी की और मैं आगे-आगे दौड़ा। लेकिन आज कौन घोड़े पर सवार होगा और कौन उसके आगे दौड़ेगा, यदि घोड़ा ही नहीं होगा।" युसुफ ने धीरे-धीरे नपी-तुली आवाज में कहा।

"जवाब सीधा है! हम दोनों साथ-साथ पैदल चलेंगे।" व्यापारी ने झट उत्तर दिया। उसके सुस्त दिमाग में युसुफ की बातें देर से उतरीं। तब वह तीर की तरह तम्बू से बाहर आ गया और देखा कि जमीन पर सिर्फ़ जीन पड़ा है और उसका खूब सूरत घोड़ा कहीं नहीं दिखाई पड़ता। वह अपने भाग्य पर अफसोस करने लगा।

तब से, उस खुदगर्ज व्यापारी में एक तबदीली आ गई, जिससे सबको ताज्जुब हुआ। उसने महसूस किया कि यदि युसुफ की थकान में हाथ बँटाता और रात के आधे समय तक घोड़े की रखवाली करता, तो युसुफ जगा रह सकता था और तब चोर के लिए घोड़ा ले जा पाना इतना आसान नहीं होता।

चन्दामामा

अपनी परम्परा की खोज करो

इस अंक में प्रकाशित प्रश्नावली के उत्तर अगले अंक में दिये जायेंगे। तब तक तुम स्वयं इन उत्तरों की खोज करो और भारत की प्राचीन परम्परा के ज्ञान से अपने को समृद्ध बनाओ।

1

"प्रतिदिन असंख्य लोगों को हम मृत्यु के मुख में जाते हुए देखते हैं। फिर भी हमारा व्यवहार ऐसा होता है मानों हम अमर हैं। यही सबसे बड़ा आश्चर्य है।"

यह किसने, कब और क्यों कहा ?

2

निम्नलिखित पौराणिक पात्रों और स्थानों के जोड़ों में क्या सम्बन्ध है ?

अ) शकुनि - गान्धार

ब) केसरी - महामेरु

स) सहदेव - महिष्मती

द) भरत - केकय

इ) वाल्मीकि - तमसा

चन्दामामा : भाषाएँ अनेक : ज्ञान और आनन्द की भावना एक

आदत

एक दिन शिव सराहपुर की हाट में एक गाय बेचने गया। गाय की तारीफ करता हुआ वह हर ग्राहक से कहता, -''गाय कितनी उत्तम नस्ल की है, यह बताने की आवश्यकता नहीं है। गाय को देखते ही आप जान गये होंगे।''

दूसरे गाँव का विष्णु घूमने के ख्याल से हाट आया हुआ था। उसने उत्सुकतावश गाय की कीमत पूछी।

''एक सौ रुपये।'' शिव ने बताया।

विष्णु की दृष्टि में गाय सौ रुपये से भी ऊपर की होगी। उसका गाय खरीदने का इरादा बिलकुल नहीं था। इसलिए सर्फ मनोरंजन के लिए उसने जान-बूझु कर इतना कम दाम बताया कि वह इतने पर न बेचे। उसने कहा,-''क्या पचीस रुपये में दोगे?''

शिव ने विष्णु को नख से शिख तक गौर से देखा और कहा,-''ठीक है, लाओ पचीस रुपये।''

विष्णु ने झट पचीस, रुपये निकाल कर दे दिये। उसे यरुपि यह संतोष था कि सौ रुपये से अधिक की गाय उसे केवल पचीस में मिल गई है, फिर भी वह जानना चाहता था कि शिव ने इतने कम दाम पर गाय क्यों बेच दी। उसने पूछा, -''मैंने तो सचमुच कम दाम बताया। यह गाय तो सौ से भी ऊपर की होगी। पर तुम इतने कम दाम पर इसे क्यों दे रहे हो?''

शिव ने रुपये अपनी जेब में रखते हुए कहा, -''जब कोई चीज़ मेरी अपनी नहीं होती तो उसे बेचते समय कीमत पर ज्यादा विचार नहीं करता। यह मेरी आदत है।'' यह कहता हुआ वह हाट की भीड़ में गायब होगया।

यह सुन कर विष्णु के हाथ के तोते घड़ गये।

उसने गाय को वहीं छोड़ दिया और वह भी दौड़ कर भीड़ में समा गया, पर दूसरी और से।

— देशपांडे

भारत

तब और अब

द्वारका

अतीत की प्रशान्ति

भारत के पौराणिक स्थलों में एक है-गुजरात में द्वारका, जिसके विषय में यह विश्वास किया जाता है कि इसकी स्थापना किसी और ने नहीं, बल्कि स्वयं श्रीकृष्ण ने की थी। इसे द्वारावटी कहा जाता था। इसका इससे भी प्राचीन नाम था-कुशस्थली। आख्यान के अनुसार श्रीकृष्ण को अपनी राजधानी के लिए अधिक स्थान की आवश्यकता थी, इसलिए समुद्र पीछे हट गया और श्रीकृष्ण को आवश्यक भूमि प्राप्त हो गई। श्रीकृष्ण के देहान्त के पश्चात समुद्र ने वह भूमि पुन: हस्तगत कर ली। तात्पर्य यह कि द्वारका का एक भाग समुद्र में डूब गया। लेकिन समुद्र ने उतना क्षेत्र छोड़ दिया जो श्रीकृष्ण के किले के अंतर्गत था। वेद द्वारका के नाम से यह द्वीप के रूप में अब भी मौजूद है।

वेद द्वारका के निकट खुदाई ने असंदिग्ध रूप से प्रमाणित कर दिया है कि शताब्दियों पहले यहाँ पर एक समृद्ध नगर बसा हुआ था। वर्तमान द्वारका पाँच पूर्व निवासों के अवशेषों पर निर्मित छठा नगर है। पुराणों के अनुसार इस स्थान का मूल श्रीकृष्ण के पूर्व काल से मौजूद था। परम्परागत रूप से यह भारत के सात पावन तीर्थों में से एक है; अन्य छ: हैं-अयोध्या, मथुरा, उज्जयिनी, वाराणसी, हरिद्वार और कांचीपुरम।
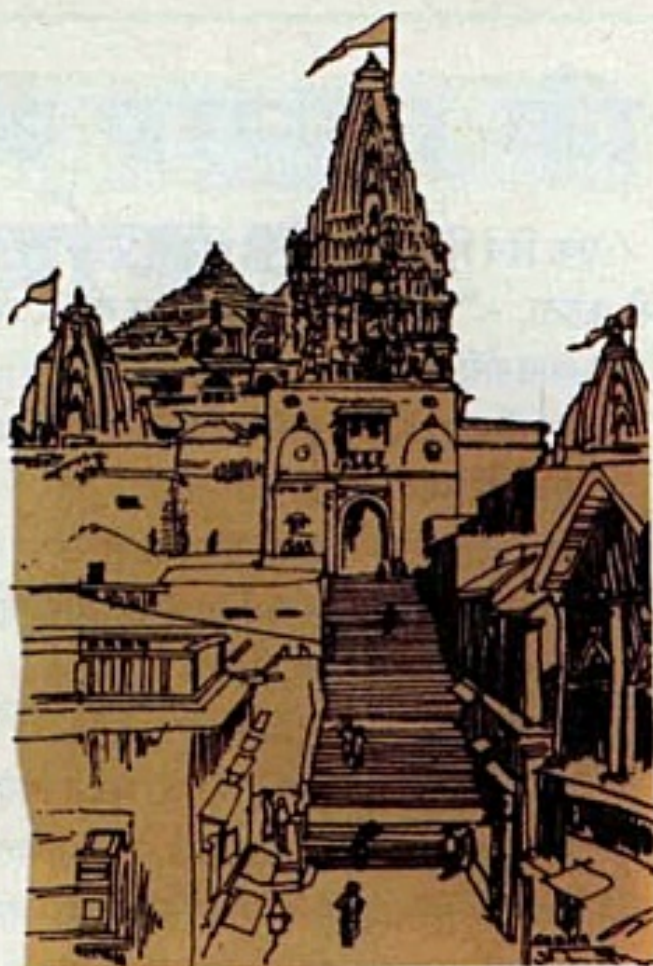
श्रीकृष्ण का महल या तो रेवातक नाम की एक मनोहर पहाड़ी के नीचे बना हुआ था या पहाड़ियों के मध्य में। वेद द्वारका वास्तव में पहाड़ियों का एक समूह है। इसका अधिकांश भाग झाड़ियों से भरा हुआ अनुपजाऊ क्षेत्र है। लेकिन समय-समय पर प्राचीन स्मारकों और मूर्तियों के अवशेष भिन्न-भिन्न स्थानों पर पाये जाते हैं। इससे स्पष्ट है कि सारा स्थान इतिहास के भिन्न-भिन्न कालों में महत्वपूर्ण रहा था।

शंकराचार्य ने भारत के चार पवित्र स्थलों पर चार मठों की स्थापना की-सुदूर उत्तर में बद्रिकाश्रम, दक्षिण में शृंगेरी, पूरब में पुरी और पश्चिम में द्वारका। द्वारका में शंकर मठ नगर के सर्वाधिक आकर्षक स्थल-द्वारकाधीश मन्दिर के निकट है। इस मन्दिर में द्वारकाधीश के रूप में श्रीकृष्ण की प्रतिमा स्थापित है।

गोमती नदी के किनारे स्थापित इस मन्दिर का मूल ढाँचा श्रीकृष्ण के परपोते वज्रनाभ द्वारा निर्मित किया गया था। राजा जगत सिंह राठौर द्वारा निर्मित इसकी वर्तमान संरचना भव्य है, जहाँ हजारों भक्तों की भीड़ प्रतिदिन उमड़ती रहती है। श्रीकृष्ण का महल वेद द्वारका में बना हुआ था जबकि इस मन्दिर के स्थान पर उनका राजदरबार था।

यहाँ की प्रतिमा अति सुन्दर है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि मेवाड़ (चित्तौरगढ़) की रानी मीराबाई सन् 1546 में इस प्रतिमा में विलीन हो गई थी।

मन्दिर की दक्षिण दिशा में 56 सीढ़ियों की दूरी पर शान्त गोमती नदी बहती है जो मान्यता के अनुसार गुप्त रूप से पावन गंगा में मिल जाती है।

इस प्रसिद्ध मन्दिर से दो किलोमीटर पर श्रीकृष्ण की अर्द्धांगिनी रुक्मिणी देवी का मन्दिर है। वहाँ नागेश्वर महादेव तीर्थ के नाम से एक प्राचीन शिव मन्दिर है। निकट ही एक पवित्र झील है, जहाँ पर श्रीकृष्ण की बाल्य काल की मित्र-मण्डली गोप-गोपियों ने अपनी आँखों का तारा श्रीकृष्ण से मिलने के लिए द्वारका आने पर शिविर लगाया था।

द्वारका नगर भगवान श्रीकृष्ण से लेकर शंकराचार्य और मीराबाई तक के अतीत की स्मृतियों में तल्लीन है।

नगर के निकट कुछ आधुनिक उद्योगों की स्थापना के बावजूद, द्वारका अब भी एक प्रशान्त क्षेत्र है। आधुनिक जीवन-शैली के सभी साधनों के होते हुए भी यहाँ के वातावरण में अतीत की गरिमा का अधिक प्रभाव है।

आधुनिक द्वारका में अनेक शैक्षिक और सांस्कृतिक संस्थाएँ हैं। यह आधुनिक भारत के अन्य नगरों के समान इसका अभिन्न अंग है। लेकिन सौभाग्यवश इसका प्राचीन वातावरण अभी तक बना हुआ है। अधिकांश संस्थाएँ श्रीकृष्ण के ही किसी न किसी नाम पर हैं। यदि द्वारकावासी इस बात पर गर्व करें कि कभी भगवान स्वयं यहाँ के राजा थे तो इसमें आश्चर्य क्या है।

एक स्मरणीय आदान-प्रदान

पुनर्विचार के पश्चात मैत्री पर हस्ताक्षर और मोहर

अब तक, राष्ट्रपति क्लिंटन की भारत यात्रा इतिहास बन चुकी है। इस घटना का असाधारण रूप से व्यापक प्रचार किया गया। राष्ट्रपति की यात्रा से महीनों पहले भारतीय समाचार पत्रों ने लगभग हर रोज इसके बारे में कुछ समाचार अथवा इसकी समीक्षा छापी। हरेक राजनीतिक दल के नेताओं ने इसके बारे में कुछ न कुछ कहा।

अमरीकी राष्ट्रपति की यात्रा इतनी महत्वपूर्ण क्यों थी? क्या इसलिए कि अमेरिका एक शक्ति शाली देश है? यह कई कारणों में से एक कारण तो हो सकता है। लेकिन सबसे बड़ा कारण यह है कि संयुक्त राज्य अमेरिका लोकतांत्रिक मूल्यों का पक्षधर है और भारतवर्ष विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है।

सन 1947 में भारत का विभाजन हो गया और पाकिस्तान का जन्म हुआ। किन्तु अधिकांश समय तक पाकिस्तान पर तानाशाहों ने राज्य किया। पाकिस्तान अपनी एकता कायम नहीं रख सका

और भयानक रक्तपात के बाद बंगला देश एक अलग देश के रूप में अस्तित्व में आया। पाकिस्तान की जनता के लिए लोकतंत्र वास्तविकता से अधिक सपना रहा है। अभी भी देश में एक सैनिक तानाशाह का राज्य है और लोकतांत्रिक ढंग से चुना गया प्रधान मंत्री जेल में बन्द है। फिर भी अमरीकी राष्ट्रपति कुछ घण्टों के लिए पाकिस्तान में रुके। बहुत लोगों के विचार से उन्हें ऐसा नहीं करना चाहिये था, क्योंकि इससे सैनिक तानाशाह का हौसला बढ़ता। कुछ लोगों का दृष्टिकोण भिन्न था। यह तथ्य, कि राष्ट्रपति वहाँ सिर्फ कुछ घंटों के लिए रुके जब कि भारत में उन्होंने पाँच दिन बिताये, यह बताता है कि वह महज औपचारिकता थी।

वह आया, नजरें मिलाईं और दिल खो बैठा

किन्तु, पहले स्थिति भिन्न थी। एक और महाशक्ति सोवियत संघ अमेरिका का कट्टर शत्रु था। भारत के सोवियत संघ का मित्र होने के कारण अमेरिका पाकिस्तान को तुष्ट रखना आवश्यक समझता था। स्थिति बदल चुकी थी। वह कट्टर शत्रु अब नहीं रहा था। अब कोई विशेष कारण नहीं है कि अमेरिका पाकिस्तान के लिए अत्यधिक प्रेम का नाटक करे। बल्कि, दूसरी ओर, अमेरिका में ऐसे लोग हैं जो विशाल और जटिल लोकतांत्रिक व्यवस्था को बनाये रखने की भारत की क्षमता की प्रशंसा करते हैं। वे यह भी जानते हैं कि भारत में महाशक्ति के रूप में विकसित होने की बड़ी संभावनाएँ हैं। वे दोनों राष्ट्रों को जोड़ने के लिए स्थायी मैत्री रखना चाहेंगे।

हम सब जानते हैं कि राष्ट्रपति क्लिंटन का कितना भावप्रवण स्वागत किया गया। जो भी हो, उसकी यात्रा का प्रत्यक्ष परिणाम निकट भविष्य में स्पष्ट होगा।

भारत में राष्ट्रपति क्लिंटन की यात्रा के दौरान पाकिस्तान-प्रेरित आतंकवादियों ने कश्मीर में उन निर्दोष सिक्खों का नर-संहार कर अपनी कायरता दिखाई जो गुरुद्वारों में प्रार्थना कर रहे थे। भारत में पाकिस्तान की जिन आतंककवादी हरकतों को क्लिंटन अबतक अनसुनी कर रहे थे, उन्हें अब अपनी आँखों के सामने ही प्रत्यक्ष प्रमाण मिल गया है। उन्हें अब भारत की सहनशीलता और विश्व-शान्ति के प्रति उसकी सचाई में कोई सन्देह नहीं रह जाना चाहिये। समय आ गया है जब अमेरिका को भारत के रचनात्मक कार्यों को खुलकर महत्व देना चाहिये और पागलों की तरह अनिष्टकारी कृत्यों में व्यस्त रहनेवाली अन्य शक्तियों की निंदा करनी चाहिये।

चित्र
कैप्शन प्रतियोगिता

क्या तुम कुछ शब्दों में ऐसा चित्र परिचय बना सकते हो, जो एक दूसरे से संबंधित चित्रों के अनुकूल हो? तुम एक सामान्य पोस्टकार्ड पर इसे लिख कर इस पते पर भेज सकते हो:

चित्र परिचय
प्रतियोगिता
चन्दामामा
वडपलनि
चेन्नै -६०० ०२६

जो हमारे पास इस माह की २५ तारीख तक पहुंच जाए। सर्वश्रेष्ठ चित्र परिचय पर १००/- रुपये का पुरस्कार दिया जाएगा, जिसका प्रकाशन अगले अंक के बाद के अंक में किया जाएगा।

ब धा इ यां

मार्च अंक के पुरस्कार विजेता हैं :

शोभा मायुर ब्रिजेन्द्र

फ्लैट न. -50, B-8 पर्यटन विहार,
वसुन्धरा इन्कलेव, दिल्ली - 96.

विजयी प्रविष्टि :

"प्यारी - प्यारी मेरी बहना पढ़ने में पीछे न रहना"

Maha Cruise

Ahoy!

nutrine
MAHA
LACTO

Nutrine Maha Lacto. The Best Lacto in Tow